अध्याय : दो

पुरष्कृत महिला साहित्यकारों के उपन्यासों में वर्णित युगीन परिस्थितियों का अध्ययन

"युज्यते इति युज घञ्, कुत्वं न गुणः| "युज' धातु में 'घञ्' प्रत्यय लगने से युग शब्द बना है| इसका अर्थ है जोड़ना एवं काल के सन्दर्भ में युग का आशय - काल का दीर्घ परिणाम है|"[1] आगे हिंदी साहित्यकारों के माध्यम से युग को और स्पष्ट तौर पर समझने का प्रयास किया गया है|

युग को परिभाषित करते हुए डॉ. नगेन्द्र लिखते हैं कि - "साहित्य के इतिहास में युग उसके जीवन का वह कालखंड विशेष है जिसमें साहित्यिक प्रवृत्तियों एवं मानदंडों की एक विशिष्ट पद्धति प्रमुख रही है|"[2]

रामचंद्र शुक्ल के शब्दों में समझें तो - "युग को किसी विशिष्ट घटना कार्य आदि के विचार से आरंभ होकर कुछ दिनों तक चलनेवाला ऐसा काल या समय स्वीकार है जो इस प्रकार के दूसरे समयों और कालों से अलग माना जाता है|"[3]

रामेश्वर शुक्ल अंचल का मानना है कि - "युग से तात्पर्य वर्तमान से नहीं है| वस्तुतः भूत, वर्तमान और भविष्य इन तीनों का सम्मिलन किसी युग को पूर्ण बनाता है|"[4]

युग को और स्पष्ट शब्दों में समझने के लिए दुष्यंत कुमार के द्वारा दी गयी इस परिभाषा को देख सकते हैं - "युग कई अर्थों में मानव इतिहास का लेखा-जोखा एवं दस्तावेज है| इस युग को समझने के लिए एक सम्यक युगबोध और संतुलित दृष्टि की आवश्यकता होती है|"[5]

परिस्थिति शब्द परिवेश के पर्याय के तौर पर प्रयुक्त किया जाता है| परिस्थिति शब्द को स्पष्ट करते हुए रामचन्द्र वर्मा अपने कोशग्रंथ में लिखते हैं कि - "परिस्थिति संस्कृत के स्थिति शब्द में 'परि' उपसर्ग लगा कर बनाया गया है| इसे हम परिवेश का कुछ संकीर्ण या संकुचित रूप कह सकते हैं| यह व्यक्ति की उस विशिष्ट अवस्था का वाचक है जिसमें वह कालचक्र, घटनाचक्र

आदि के प्रभाव में पड़कर कोई काम करता है| 'परिस्थिति' सदा बाहरी बातों के संयोग से बनती है| हमारे आस-पास जो घटनाएँ, चीजें आदि होती हैं, उन्हीं का समेकित रूप परिस्थिति है|"[6]

किसी भी लेखक के लिए परिस्थिति विशेष महत्त्व रखती है| युगीन परिस्थिति के बिना उनका लेखन निराधार और कोरी कल्पना मात्र बनकर रह जाएगा| इस सन्दर्भ में बाबू गुलाब राय लिखते हैं कि - "लेखक अपने समय का प्रतिनिधि होता है| उसको जैसा मानसिक खाद मिल जाता है वैसी ही उसकी कृति होती है| वह अपने समय के वायुमंडल में घूमते हुए विचारों को मुखरित कर देता है| कवि(साहित्यकार) वह बात कहता है, जिसको सब लोग अनुभव करते हैं किंतु जिसको सब लोग कह नहीं सकते| सहृदयता के कारण उनकी अनुभूति औरों से बढ़ी-चढ़ी होती है|"[7] अतः किसी लेखक के लेखन में प्रयुक्त युगीन सन्दर्भउसके मौलिकता को दर्शाता है| यही वजह है कि "हर युग के साहित्य में सामयिक परिवेश अर्थात् युग का जीवन अपनी पद्धतियों, संस्कारों, मूल्यों, चरित्रों, आवरणों और परिस्थितियों में परिलक्षित होता है|"[8] जैसा कि हम जानते हैं साहित्य का समाज से गहरा संबंध है और समाज में घटने वाली घटनाओं का साहित्य में समय-समय पर जिक्र इसी ओर इशारा भी करता है| जिसे प्रेमचंद स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि- "साहित्य अपने काल का प्रतिबिंब होता है| जो भाव या विचार लोगों के हृदयों को स्पंदित करते हैं, वही साहित्य पर भी अपनी छाया डालते हैं|"[9] अतः साहित्य में युगीन दृश्यों व परिस्थितियों का आना उसकी मौलिकता में जान डालने का कार्य करता है| इस प्रकार प्रस्तुत अध्याय में सभी पुरस्कृत महिला साहित्यकारों के उपन्यासों में वर्णित परिस्थितियों के विभिन्न आयामों (सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनीतिक एवं आर्थिक) का विश्लेषण किया गया है|

2.1 सामाजिक परिस्थिति

'society is a web of social relationships' - maciver and page |

समाज क्या है? इसका उत्तर जितना सरल है उतना ही मुश्किल भी| समाज शब्द संस्कृत के दो शब्द 'सम+घञ्+अज'[10] से बना है| सम का अर्थ है इकट्ठा या एकसाथ और अज का अर्थ होता है

साथ रहना| अर्थात् एक साथ या समूह में रहना समाज कहलाता है| साधारण शब्दों में समाज व्यक्तियों के समूह को कहा जाता है| लेकिन समाजशास्त्र के अर्थ में व्यक्तियों के बीच के संबंध को समाज कहते है| दो लोगों के आपस का संबंध सामाजिक नियमों पर निर्भर करता है| सामाजिक नियम कहने का तात्पर्य है उनके बीच के आपसी संबंध जैसे- माँ-बाप, भाई-बहन, सगे-संबंधी, मित्र, पड़ोसी, अजनबी| इनका आपस में औपचारिक और अनौपचारिक संबंध ही समाज है| अत: जहाँ जीवन है वहां समाज है, मानव जीवन कहें तो बात ज्यादा स्पष्ट हो जाती है| यह सामाजिक भाव कमोबेश सभी जीव में मौजूद होता है| लेकिन मनुष्य अपनी कुशाग्र बुद्धि के कारण अन्य जीवों से ज्यादा विकसित और अलग है|

समाज अपने आप में एक पूर्ण शब्द है| समाज कहते ही उससे जुड़े हर पहलू अपने आप खुलते चले जाते हैं| यह जितना पूर्ण है उतना ही व्यापक भी| समाज मनुष्यों का समूह है कहने भर से उस समय में मौजूद तमाम चीजें उसके साथ जुड़ जाती हैं जो प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से उपस्थित होती हैं| वैसे तो समाज की एक साधारण परिभाषा उसे समझाने के लिए सक्षम है लेकिन कई विद्वानों ने इसकी व्याख्या अपने समय सापेक्ष करना उचित समझा| विद्वानों के द्वारा समाज को कई तरह से परिभाषित किया गया जिसे आगे उदाहरण के तौर पर दर्शाया गया है|

मोरिस गिन्सबर्ग लिखते हैं- “समाज ऐसे व्यक्तियों का समूह है जो कुछ संबंधों अथवा व्यवहारों की विधियों द्वारा आपस में बंधा और कुछ व्यक्तियों से भिन्न है जो इस प्रकार के संबंधों द्वारा आपस में बंधे हुए नहीं है अथवा जिनके व्यवहार उनसे भिन्न है|”[11]

राईट का मानना है कि- “मनुष्यों के समूह को समाज नहीं कहा जा सकता, बल्कि उस समूह के अंतर्गत व्यक्तियों के संबंधों की व्यवस्था का नाम समाज है|”[12]

मैकाइवर और पेज के अनुसार “society is a system of usages and procedures of authority and natural aid of many groupings and divisions of controls of human behaviour and of liberties.”[13]

डॉ. संपूर्णानन्द अपनी किताब ‘समाजवाद’ में लिखते है- “सम्यक अजन्ति गच्छन्ति जनाः अस्मिन इति समाज”[14] अतः जहाँ लोग मिलकर एक साथ, एक गति से चलें वही समाज है|

जोगेन्द्र सिंह अपनी किताब में समाज को परिभाषित करते हुए लिखते हैं कि- “बुनियादी रूप से समाज मानव की जटिल सम्बन्धताओं का ऐसा समूह होता है, जिसमें कई उपसमूह या घटक अंतर्भूत होते हैं| ये घटक तत्व हैं- व्यक्ति, परिवार, वर्ग समुदाय, राज्य आदि|.... समाज में रहते हुए व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के संपर्क में आता है| संपर्क की यह क्रिया निरंतर घटित होती रहती है, जिस सामाजिक संबंधों को ही समाज कहा जाता है|”[15]

ऊपर लिखी गई परिभाषाओं को मद्देनजर रखते हुए इतना कह सकते हैं कि व्यक्तियों के समूह में एक-दूसरे के प्रति उत्पन्न क्रिया-प्रतिक्रिया से तैयार परिवेश समाज कहलाता है| मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और उससे जुड़े हर एक पहलू समाज के अंतर्गत आते हैं| मनुष्य के जीवन काल की तमाम क्रियाएं जो उसके जन्म से लेकर मृत्यु के बीच घटित होती हैं, इसी सामाजिक संरचना के अंतर्गत आती हैं| समाज को लेखकों ने कई स्तर पर परिभाषित किया लेकिन सब में एक बात समान थी वो है व्यक्तियों के आपसी संबंध| यही संबंध अपना रूप, समय और परिस्थिति वश बदलता रहता है| इसके इसी बदलाव को लेखकों ने अपने तरीके से समझा और लिखा है|

भारतीय सन्दर्भ में यदि समाज की संरचना के बारे में बात करें तो वेद-पुराणों में इसे देखा समझा जा सकता है| ‘मनुस्मृति’ इसका एक अच्छा उदाहरण हो सकता है| इसके आलावा हिंदी के प्रसिद्ध लेखकों में तुलसीदास, सूरदास, कबीर, दादू के लेखन में समाज की धारणा को देखा समझा जा सकता है|

तुलसीदास के लेखन में समाज वर्णाश्रम पद्धति अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आदि वर्णों पर आधारित था| तुलसीदास ने अपने लेखन में जिस रामराज्य की कल्पना की थी वह पुरुष प्रधान था| साथ ही यह समाज अपने मानवीय रूप को भी लेकर चलता था| सूरदास के यहाँ भी समाज वर्णव्यवस्था पर ही आधारित था लेकिन वो तुलसीदास की तरह रूढ़ रामराज्य की कल्पना नहीं करता| वहीं दादू और कबीर के यहाँ का भी समाज कमोबेस एक सा ही था| यहाँ भी समाज वर्ण पर आधारित था लेकिन दादू ने इसे कर्म के आधार पर ही ज्यादा देखा|

मोटे तौर पर देखा जाये तो भारतीय समाज की परिकल्पना में वर्ण और वर्ग बराबर रूप से सम्मिलित है| हर एक समय यह स्थिति कुछ बदली जरूर है लेकिन आंशिक रूप से| जैसा कि हम जानते हैं कि साहित्य समाज की ही प्रस्तुति है| लेखक साहित्य और समाज के बीच होता है जिसकी उपस्थिति एक अनुकर्ता के तौर पर होती है| अर्थात् कोई भी रचना अनुकरण का अनुकरण है| इसमें लेखक अपनी लेखन शैली के माध्यम से समाज से जो भी चीजें ग्रहण करता है कभी उसके उसी रूप में या उसे कुछ नए रूप में पाठक के सामने प्रस्तुत करता है|

जब हम उपन्यासों में सामाजिक परिस्थिति की बात करते हैं तो उसमें मुख्य रूप से समाज और परिवार से जुड़े हरेक पहलू की बात करते हैं| समाज में वर्ग भेद, परिवार का द्वंद्व समाज में शिक्षा के प्रभाव, स्त्री की सामाजिक स्थिति आदि संबंधों का यहाँ विश्लेषण किया जाता है| आगे समाज के इन्हीं पक्षों को उपन्यासों के माध्यम से देखा जा सकेगा|

'जिंदगीनामा' एक आँचलिक उपन्यास है| भारतीय ग्रामीण पृष्ठभूमि की चपलता और लोगों के आपसी संबंध की सहजता के विभिन्न रूपों को यहाँ देख सकते हैं| इस उपन्यास में जितनी संजीदगी से यहाँ के लोगों के आपसी प्रेम को दिखाया गया है उतनी ही सूक्ष्मता से वर्ण और वर्ग भेद को भी प्रस्तुत किया गया है| ग्रामीण परिवेश में पूरा समाज एक परिवार की तरह कार्य करता है जिसे यहाँ लेखिका ने साफ तौर पर स्पष्ट भी किया है| उपन्यास में वे सभी तत्व मौजूद हैं जो

एक समाज के लिए उपयुक्त होने चाहिए| व्यक्ति से लेकर प्रकृति एवं जीव-जंतुओं के प्रति लोगों का लगाव एवं उसके संबंध इन सभी चीजों को इस उपन्यास में दिखाया गया है|

परिवार लोगों के संबंध की एक सुव्यवस्थित संरचना है जिससे समाज का निर्माण होता है| विश्व के किसी भी देश को उदाहरण के तौर पर देखें तो परिवार और उसकी बनावट की संरचना अर्थात् विवाह संस्था कमोबेश एक सामान ही है| प्रत्येक समाज के प्राथमिक ढाँचे की बनावट यहीं से शुरू होती है| विवाह किसी भी सभ्य समाज की वह प्रक्रिया है जो संतान उत्पत्ति को पोषित करता है| परिवार कहने से आशय ही यही समझा जाता है कि जहाँ दो विपरीत लिंग के लोग संतान उत्पत्ति कर उसका पालन-पोषण कर सकें| मैकाइवर और पेजे के शब्दों में समझें तो "परिवार एक ऐसा समूह है जो यौन संबंधों के आधार पर परिभाषित किया जा सकता है और इतना छोटा और स्थाई है कि जिसमें संतानोत्पत्ति और संतानों का पालन-पोषण किया जा सके|"[16] पर इस फ्रेम में अन्य वर्ग अर्थात् थर्ड जेंडर और एल.जी.बी.टी. समूह छूटता हुआ प्रतीत होता है, ये भी इसी समाज का हिस्सा हैं जिसे झुठलाया नहीं जा सकता| अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए एक लम्बे समय से यह समुदाय संघर्षरत हैं| संतान उत्पत्ति की संरचना से अलग होने के बावजूद भी यह समुदाय इसी समाज का हिस्सा है|

जैसा कि हम जानते हैं कि परिवार को समाज में एक महत्वपूर्ण संस्था के रूप में देखा जाता है| परिवार समय सापेक्ष अपने रूप की संरचना को बदलता रहा है| प्राचीन समय में परिवार की संकल्पना कुछ और थी लेकिन आज के आधुनिक दौर में इसकी संरचना काफी अलग है| अब तक दी गई परिभाषाओं में परिवार संतान उत्पत्ति को केंद्र में रख कर लिखा गया, लेकिन समय जैसे-जैसे अपना रूप बदला इसके कुछ और भी रंग देखने को मिले| इस नये रूप से आशय समाज के उस वर्ग से है जो परिवार की संरचना में सम्मिलित तो हैं लेकिन संतान उत्पत्ति की श्रेणी में नहीं आते| नाला सोपारा इसी समाज के अन्य रूप की प्रस्तुति करता है| पुरस्कृत महिला साहित्यकारों

ने अपने उपन्यासों में पारिवारिक संबंध और इसके बदले रूप का चित्रण बहुत ही सजीवता के साथ किया है|

जैसे समाज का आधार परिवार होता है वैसे ही परिवार का आधार है स्त्री-पुरुष (पति-पत्नी) संबंध| परिवार की नींव ही पति-पत्नी संबध के आदर्श रूप पर स्थापित होती है| प्राचीन समय में यह रूप कुछ और तरह से था और आज के आधुनिक युग में इसने अलग आकार ले लिया है| आधुनिक युग के बदलते मूल्यों का इस पर आज प्रभाव देखा जा सकता है| भूमंडलीकरण और उदारीकरण के दौर में समाज के बदलते आकार ने सबको बराबर रूप से प्रभावित किया है| जितना इसका तनावपूर्ण असर बाजार पर दिखता है उतना ही परिवार के संबंधों पर भी इस असर को देखा गया है| 'कलिकथा वाया बाइपास', 'पारिजात' और 'नाला सोपारा' इन सभी उपन्यासों में ऐसे कई परिवारों का वर्णन किया गया है जिस पर बाजार का या यूँ कहें कि बदलते दौर का सीधा असर दिखता है|

प्राचीन समय में पति को श्रेष्ठ और देवतुल्य माना जाता था| स्त्रियों को हमेशा पुरुष से कम एवं उसके पीछे चलने की अनुमति थी| कम बोलना पति के खाने के बाद ही खाना बच्चों की परवरिश की जिम्मेदारी भी माँ के ही हिस्से में होती थी| इस तरह के कई ऐसे उदाहरण हैं जो स्त्री को छोटा या पुरुष से कमतर बनाता था| इसके बावजूद उस समय में स्त्री-पुरुष संबंध में काफी आत्मीयता देखी जाती थी| लेकिन आज आधुनिक दौर ने उन तमाम रिश्तों में दरार, मनमुटाव और तनाव पैदा कर दिया है जो सामाजिक संस्था को बनाती है| पहले जैसी स्थिति अभी के पति-पत्नी के रिश्ते में काफी कम देखने को मिलती है| आजादी से पहले और बाद व्यक्ति के हर तरह के संबंधों में काफी बदलाव देखा जाने लगा है| खासकर स्त्री-पुरुष(पति-पत्नी) संबंध में इसका ज्यादा प्रभाव देखा गया| बाद के समय में इसके बदले हुए एवं अलग स्वरूप को उपन्यास के माध्यम से देखा जा सकता है|

'जिंदगीनामा' में शाह और शाहनी परंपरागत ग्रामीण समाज का एक जीवंत उदाहरण हैं| सामाजिक संरचना में पति-पत्नी का संबंध सबसे ऊपर माना गया है| उपन्यास में स्त्री-पुरुष यानि पति-पत्नी के रूप में शाह और शाहनी के आपसी सामंजस्य को लेखिका ने काफी खूबसूरती के साथ दर्शाया है| पति-पत्नी का एक-दूसरे के प्रति सम्मान और आदर भाव को शाह और शाहनी के कुछ प्रसंग द्वारा देखा जा सकता है -

"शाहनी, प्रारब्ध के आगे किसी का बस नहीं| मेरी मानो तो उनके कुनबे से किसी लड़के का ब्याह अपने हाथों कर छोड़|

छन-भर को तो शाहनी का दिल दहल गया| फिर झटपट संभलकर कहा- 'मेरी मानो शाहजी, तो एक लड़का गोद ले लो|'

शाहजी शाहनी की पीड़ समझे| पुचकार कर कहा- 'ये निर्णय-फ़ैसले तुम्हारे हाथ| जो मन को रुचे, वह करो|'

वचन सुन शाहनी का मन परच गया| सर हिला कर बोली- 'सयानफ़ आपकी, मैं किस जोग!'.....

शाहनी का दिल तो ऐसा उमड़ा कि रो-रो शाहजी के गले जा लगे, ठिठकी-सी अपने धनी को देखती चली| फिर कदम उठाया| दहलीज तक जाकर मुड़ी- 'बेसन की तंदूरी खा लोगे न!' सिर हिला दिया- हाँ| शाहजी तकते रहे और शाहनी दहलीज लाँघ गई| चाल में संकल्प ऐसा कि विधि से निपटारा करना हो|"[17] भारतीय परंपरा में पति-पत्नी के आदर्श रूप को यहाँ साफ तौर पर देखा जा सकता है| खासकर ग्रामीण परिवेश में इस तरह के संबंधों के आदर्श रूप को देखा जा सकता है|

'कलिकथा वाया बाईपास' में किशोर बाबू और उनकी पत्नी के बीच का संबंध परंपरा को दर्शाता है जिसमें पत्नी अपने पति के मान का और बच्चों की संवेदनाओं का पूरा-पूरा ख्याल रखती है| "एक दिन किशोर बाबू की पत्नी को किशोर बाबू का पिछली रात को लिखा हुआ एक कागज मिला| उन्होंने उसे पढ़कर छुपा दिया| उन्हें यह बात नहीं जंची कि वे बच्चों को इस कागज के

बारे में बताएं और फिर परेशानी में डालें|... किशोर बाबू की पत्नी की परेशानी का कारण यह भी था कि उनकी बड़ी लड़की लैंसडाऊन रोड, जिसका नया नाम नेताजी के बड़े भाई के नाम पर शरत बोस रोड हो गया है, पर ही रहती है| यदि वह यह विवरण को पढ़ लेती, तो उसे बहुत तकलीफ होती कि उसके पिता ने अपनी सनक उतारने के लिए कलकत्ते की बाकी सब सड़कों को छोड़कर उसी के ससुराल की सड़क को चुना|"[18]

'मिलजुल मन' में कनकलता, बैजनाथ और उनकी दो बेटियों वाला परिवार आजादी के बाद के समाज में आये बदलाव वाला आधुनिक परिवार है| जहाँ लडकियों को पढ़ने और अपने मनमुताबिक जीवन जीने की आजादी थी| वहीं कनकलता और बैजनाथ का संबंध परम्परावादी होते हुए आधुनिक युग के सभी मानदंड को भली-भांति स्वीकार किये हुए है| उपन्यास में लेखिका सामाजिक और पारिवारिक संबंध का एक सुंदर चित्र प्रस्तुत करती हैं| सन्दर्भ सापेक्ष कनकलता की माँ अपने जीवन के अंतिम समय में अपनी बेटी के भविष्य की चिंता जाहिर करते हुए अपने पति के मित्र डॉ. कर्णसिंह से अपने परिवार के सदस्यों की मौजूदगी में कहती है कि "कनक बहुत नाज़ुक है, उसकी मर्जी के खिलाफ़ कुछ होता है तो बीमार पड़ जाती है| मैं चाहती हूँ उसके लिए वर आप तलाशें|"[19] प्रस्तुत उद्धरण से संबंध की महत्ता का अंदाजा लगाया जा सकता है| यहाँ परिवार और मित्र के संबंध का सुखद अनुभव समाज के अच्छे स्वरूप को दर्शाता है|

'पारिजात' में प्रो. प्रह्लाद दत्त और उनकी पत्नी प्रभा दत्ता आज के आधुनिक दौर की कश्मकश जिंदगी के प्रतीक के रूप देखे जा सकते हैं| विपरीत परिस्थिति होने के बावजूद अपने परिवार को संभालना आज के समय में जीवन जीने की कला को दर्शाता है| आधुनिक युग में रिश्तों की कमजोर शाख एक बड़ी समस्या के रूप में हमारे सामने उभर का आया है| यह उपन्यास ऐसे ही एक टूटे हुए परिवार को पुनः एक सिरे से जोड़ने की कथा कहता है| उपन्यास में प्रह्लाद दत्त अपने बेटे के टूटते हुए परिवार को समेटने के साथ-साथ अपने दाम्पत्य जीवन को भी बड़े

आत्मीय रूप से सँभालते हैं| जितनी चिंता अपने बेटे की वे करते हैं उतनी ही एक-दूसरे की भी करते हैं|

“तुम ? तुम इस हालत में सऊदी अकेली जाओगी ? वह इलाहबाद नहीं है| दूर-दूर तक कोई जान-पहचान नहीं होगी, फिर... झुंझलाए-से प्रह्लाद दत्त यकायक अजीब सी बेचारगी से चुप हो गए|

‘भूल गया था कि माँ हो और मैं बाप| तुम उसकी खताएँ जानकर भी सजा का ऐलान नहीं कर पाओगी और मैं बाप होकर भी उसे सजा देने में अपने को मजबूर पाता हूँ|’

‘प्रह्लाद दत्त ने परेशान हो दोनों हाथों से चेहरा छुपाया, फिर पल-भर बाद बोल उठे, हम सह लेंगे प्रभा! इन शीशे की किरचियों से लहूलुहान दिल को संभाल लेंगे... तुम जाओ... हमारा इकलौता बेटा है...हमारे जिगर का टुकड़ा|”[20]

‘नाला सोपारा’ उपन्यास वंदना और उनके पति, बेटे-बहू सिद्धार्थ और सेजल के माध्यम से परंपरागत और आधुनिक तौर तरीके के प्रेम का वर्णन करता है| वंदना का प्रेम पुराने रीति रिवाज और परंपरा से बंधा हुआ है, जिसमें आदर के साथ विनोद भाव श्रेष्ठ है| नए समय में खुद को और अपने रिश्तों को कैसे बांध कर रखा जाता हैं वंदना जानती हैं|

“इलेक्ट्रॉनिक की नयी-नयी चीजों को बापरने का बहुत शोक है न पप्पा को? एक शाम दुकान से लौटते हुए पप्पा इलेक्ट्रॉनिक की घंटी खरीद लाए थे| उसको तेरे कमरे की मेज पर रख दिया था| जब तुझे पास बुलाना होता था, अपने कमरे में बैठे हुए उसका बटन उठाकर दबा देते थे और तू दौड़ी चली आती थी, ‘फिजूल खेल सूझता है| किसलिए बुलाया? चपरासी हूँ क्या?’

मेथी वाला खाखरा खाने को जी हो रहा है, आधा कप मसाले वाली चाय के साथ| मिलेगी|’

तू विनोद पर उतर आती| घंटी बजाकर बुलाते रहते हो मुझको, नाम याद है मेरा?”[21]

वहीं सिद्धार्थ और सेजल के रिश्ते में जितना प्रेम है उतना ही अविश्वास का भाव भी| इनका संबंध आज के आधुनिक दौर को दर्शाता है, जो शंका और भय से भरा हुआ है|

“आपका जीनियस सिद्धार्थ आपसे नाराज क्यों हो गया था? तो सेजल भाभी ने सजल होकर था, ‘मुझसे मेरे पूर्व प्रेमी की चिट्ठियां चाहिए उन्हें| ‘चिट्ठियां दे दो|’ मैंने कहा था उनसे| यही तो दुःख है मुझे, प्रेमी ने कभी चिट्ठियां ही नहीं लिखीं|”[22]

उपन्यास की गुणवत्ता के आधार पर सर्वसम्मति से हिंदी का पहला उपन्यास ‘परीक्षा गुरु’ को माना जाता है| हिंदी उपन्यास का प्रारंभिक विषय एक सामाजिक यथार्थ रूप में स्वीकार किया गया है| “साहित्य के विभिन्न रूपों में वैयक्तिकता और सामाजिकता की स्थिति एक समान नहीं होती| अगर कविता स्वभाव से अधिक व्यक्तिगत होती है तो उपन्यास अधिक सामाजिक| आलोचना रचना की व्याख्या करती हुई, उसे व्यापक पाठक समुदाय तक पहुँचाने में मदद करती हुई खुद सामाजिक बनती है और रचना को भी सामाजिक बनाती है|”[23] अतः ऊपर वर्णित सभी लेखिकाओं के उपन्यासों में सामाजिक विविधता को बखूबी समझा जा सकता है|

2.2 सांस्कृतिक परिस्थिति

संस्कृति का समानार्थी अंग्रेजी में कल्चर (culture) शब्द का प्रयोग किया जाता है| इसकी उत्पत्ति लेटिन भाषा के कल्टुरा (cultura) शब्द से मानी जाती है| 'हिंदी शब्द सागर' पुस्तक में अर्थ की दृष्टि से संस्कृति के लिए कई अन्य शब्दों का प्रयोग किया गया है जो इस प्रकार से वर्णित हैं- "शुद्धि, सफाई, संस्कार, सुधार, मानसिक विकास, सजावट, सभ्यता आदि|"[24] सामान्य अर्थों में संस्कृति को संस्कार से जोड़कर देखा जाता है| संस्कार कहने से तात्पर्य व्यवहार में प्रयुक्त किये जाने वाले नियम और विधान है जो व्यक्ति को निर्देशित और नियमित बनाता है| संस्कृति का सीधा आशय मानव व्यावहार से होता है, अतः व्यक्तियों के द्वारा व्यवहारों का पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरण संस्कृति है| 'एडवर्ड टायलर' का कहना है कि - "संस्कृति वह जटिल समग्रता है, जिसमें ज्ञान, विश्वास, कला, आदर्श, कानून, प्रथा एवं अन्य किन्हीं भी आदतों क्षमताओं का समावेश होता है जिन्हें मानव ने समाज के सदस्य होने के नाते प्राप्त किया है|"[25]

'मेकाइवर' लिखते हैं - "संस्कृति हमारे नैतिक व्यवहार में कला, साहित्य, धर्म, मनोरंजन और आनंद पाये जाने वाले रहन-सहन और विचार के तरीकों में हमारी प्रकृति की अभिव्यक्ति है|"[26]

रोमिला थापर' संस्कृति को कुछ ऐसे परिभाषित करती हैं - "संस्कृति सामाजिक प्रक्रिया में रचित और अर्जित प्रतीकों की एक व्यवस्था है और इस व्यवस्था की निरंतरता से परंपरा का निर्माण होता है|"[27]

रामधारी सिंह दिनकर लिखते हैं कि - "संस्कृति जिन्दगी का एक तरीका है और यह तरीका सदियों से जमा होकर उस समाज में छाया रहता है जिसमें हम जन्म लेते हैं| इसलिए जिस समाज में हम पैदा हुए हैं अथवा जिस समाज में मिलकर हम जी रहे हैं उसकी संस्कृति हमारी संस्कृति है|"[28]

हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार - "संस्कृति मनुष्य की विविध साधनाओं की सर्वोत्तम परिणति है|"[29]

ऊपर लिखित परिभाषाओं से इतना स्पष्ट होता है कि जीवन में विद्यमान समस्त वस्तुओं का व्यवहारिक तौर पर अभ्यास ही संस्कृति है|

किसी भी संस्कृति के सन्दर्भ में बात करने से पहले हमें उसके इतिहास को जानना और समझना होगा| भारतीय संस्कृति के सन्दर्भ में देखें तो जैसे-जैसे इसका इतिहास बदलता गया संस्कृति भी बदलती गई| सभ्यता और संस्कृति को इतिहास सापेक्ष देखने पर ही यह साहित्य के लिए तर्कसम्मत समझा जायेगा| भारत की बुनियादी संस्कृति को समझने के लिए पहले यहाँ के इतिहास और उससे उत्पन्न क्रांति को देखना होगा| भारत की बुनियादी संस्कृति के बारे में रामधारी सिंह दिनकर लिखते हैं- "भारतीय संस्कृति में चार बड़ी क्रांतियाँ हुई हैं और हमारी संस्कृति का इतिहास उन्हीं चार क्रांतियों का इतिहास रहा है| पहली क्रांति तब हुई, जब आर्य भारतवर्ष में आए| दूसरी क्रांति तब हुई, जब महावीर और गौतम बुद्ध ने इस स्थापित धर्म या संस्कृति के विरुद्ध विद्रोह किया तथा उपनिषदों की चिन्ताधारा को खींच कर वे अपनी मनोवांछित दिशा की ओर ले गए| तीसरी क्रांति उस समय हुई, जब इस्लाम, विजेताओं के धर्म के रूप में, भारत पहुँचा और इस देश में हिंदुत्व के साथ उसका सम्पर्क हुआ| और चौथी क्रांति हमारे अपने समय में हुई, जब भारत में यूरोप का आगमन हुआ|"[30]

ऊपर लिखी गई परिभाषाओं से स्पष्ट है कि संस्कृति हमारे रोज की जीवन शैली में व्याप्त प्रवृत्ति या व्यव्हार को व्यक्त करने वाली भौतिक दशा है| आगे इन्हीं परिभाषाओं को ध्यान में रखते हुए उपन्यास में उधृत उद्धरणों से इसे समझने का प्रयास किया है|

'जिंदगीनामा' उपन्यास में विभाजन से पूर्व पंजाब के सहज और स्वाभाविक रूप का चित्रण है| उपन्यास में ग्रामीण जीवन की संस्कृति के सुन्दर और आकर्षित रूप देखते ही बनता है| हिन्दू-

सिक्ख-मुस्लिम तीनों समुदाय के मिले-जुले सांस्कृतिक रूप का वर्णन लेखिका ने बड़े ही खूबसूरती के साथ एक ही माले में पिरोया है| उपन्यास में त्रिंजन काटना, बैसाखी, लोहड़ी सभी समुदाय के लोग एकसाथ मिलकर मनाते हैं जो सामाजिक-सांस्कृतिक एकता की खूबसूरती को दिखाता है| उपन्यास के शुरू में ही लेखिका ने शरद पुण्य की रात का वर्णन किया है जो गाँव की लोक-संस्कृति का सुन्दर चित्र बयां करती है| भारतीय जीवन में कहानी कहने की परंपरा रही है इस उपन्यास में भी लालाजी इसी प्रथा के सूचक के रूप में दिखाए गए हैं| यह कथा दरअसल अपनी परंपरा को कायम रखने का तरीका है, जिसे आगे की पीढ़ी उसी रूप में धारण कर सके| ग्रामीण संस्कृति को उपन्यास के इस एक प्रसंग से समझा जा सकता है -

"मेरे बच्चो, अवतार वह जो धरती हल से जोतकर पानी से सींचता है| तृप्त करता है| बीज बोता है| फ़सलें उगाता है| आगे सुनो| सबसे पहला अवतार हुआ आदि पुरुख प्रजापति| प्रजापति आप ही नर था| आप ही नारी था| उसने आप ही अपने को दो हिस्सों में बाँटा| एक हिस्से से पैदा हुए बल्द| दूसरे से उत्पन्न हुई गोऊ माता|"[31] इसी प्रसंग को कृष्णाजी आगे सामान्य जन-जीवन में लोगों के विश्वास को जो अपने पूर्वजों के द्वारा बताये गए श्रद्धा और भक्ति के भाव को चित्रित करता है कुछ इस तरह से दिखाया है - "देवताओं की तीन पाँतें हैं : पृथ्वी के देवता \ आकाश के देवता \ बड़े मंडल के देवता| मदरसे में पढ़ते बोद्दे को चमकार हो गया - लालाजी हर कोई मरकर बड़े मंडल में ही जाता है| बड्डे-वड्डेरे जब पूरे हो जाते हैं न तो ऊपरवाले मंडल में जा बैठते हैं| आकाश-गंगा के किनारे मंजियाँ बिछी हैं| उन्हीं पर बैठ सब दादे-नाने हुक्का पीते रहते हैं| नानियाँ-दादियाँ पीढ़ियों पर बैठ चरखे कातती हैं|"[32] उपन्यास में ऐसे कई प्रसंग सामने आते हैं जिसमें लोक परंपरा की भीनी खुशबू को महसूस किया जा सकता है| उदाहरण के तौर पर एक और प्रसंग को देख सकते हैं - "याद रखो, सूरज सारी दुनिया, लोक-परलोक, ऊपर-थल्ले में, धरती-आकाश में सबसे बड़ा है| वह सच्ची-मुच्ची का महाराज है| ब्रह्मांड का सरताज सम्राट है| अब सुनो

कथा सूरज की धी-धियानी की| सूरज ने अपनी धी सूरजा व्याही आकाश को तो सूरज महाराज ने इतनी बड़ी उजियारी चादर धी-जमाई को दी कि वह सारे मंडल में बिछती चली गई|"[33]

कृष्णा जी त्रिंजन के माध्यम से पंजाबी ग्रामीण संस्कृतिक की रोचकता को अपने उपन्यास में अंकित करती है| 'त्रिंजन' असल में पंजाब के ग्रामीण औरतों के मिलकर काम करने की जो परंपरा है उसे बयाँ करती है| पंजाब की औरतें इसे उत्सव की तरह मनाती है| उपन्यास में इस तरह साथ मिलकर रहने, खाना-खाने, गाना-गाने और चरखे पर सूत काटने का यह रिवाज इस समाज की संस्कृति का सुन्दर चित्र प्रस्तुत करता है - "शाहनी ने नज़र फिराई- क्यों री, राबयाँ और फ़तेह क्यों न आई? जा री नियामते, नवाब को आवाज़ दे ! बहनों को बुला लाएगा| कहना, चरखे लाना न भूलें| नियामते उठी ही थी कि दोनों बहनें आन पहुँचीं| बड़ी उम्रें तुम्हारी ! चरखे लाई हो न ? जी शाहनी:

रुई बिन पिंजन कैसा

चरखे बिन त्रिंजन कैसा !"[34]

भारतीय संस्कृति में त्योहारों का महत्वपूर्ण स्थान माना जाता है| कृष्णाजी अपने उपन्यास में इसका पूरा ध्यान भी रखती हैं| उपन्यास की पृष्ठभूमि आंचलिकता से सराबोर है, ऐसे में त्योहारों का वर्णन सहज ही होता है| इस उपन्यास में भी इस तरह की सहज अनुभूति की अभिव्यक्ति दिखलाई पड़ती है| भारत अपनी विविधता के लिए जाना जाता रहा है खासकर सांस्कृतिक विविधता के लिए ऐसे में इस तरह के त्योहारों का मनाया जाना पूरे भारतवर्ष में एकता और अखंडता को प्रस्तुत करता है| भारत के सभी क्षेत्रों में हर वर्ष हर माह कुछ-न-कुछ पर्व-त्यौहार मनाया जाता है| हरेक राज्य में एक ही समय पर भिन्न-भिन्न नामों से कुछ त्यौहार भी मनाये जाने की प्रथा है| जिसमें जनवरी माह में मनाया जाने वाला त्यौहार कुछ खास त्योहारों में से एक है| यह वर्ष की पहली फसल के काटने पर मनाया जाता है, जिसमें स्थानीय लोग फसल को अग्नि

देव को भोग के रूप में चढाते हैं| इस त्यौहार को लोग कहीं यह बीहू, तो कही पोंगल, संक्रांति, तो कहीं लोहड़ी के रूप में मनाते हैं| लोहड़ी और बैसाखी पंजाबी इलाके में जनवरी और अप्रैल माह में मनाया जाने वाला त्यौहार है| इस उपन्यास में भी लेखिका ने इस तरह के त्योहारों को बड़ी ही सजीवता के साथ दर्शाया है| लेखिका ने लोहड़ी को अपने उपन्यास में भी कुछ ऐसे ही अंकित किया है| इसे कुछ उदहारण के द्वारा देख सकते हैं - "खुले आँगन में उपलों के ऊँचे ढेर पर लकड़ियों के अम्बार सजने लगे| पहले मुंड, फिर कीकर-बेरी के गठ्टर| ऊपर कपास की सूखी मनछिट्टी| खुशियोंवाले घरों से चंगेरें आने लगीं| मक्का के फूल| गुड़ की भेलियाँ| रेवड़ियाँ| चावल-तिल की त्रिचौली| कच्ची लस्सी के गडुवे और मूलियों भरी पच्छियाँ|.... कच्ची लस्सीवाली गडवी को मौली बांधी| थाली में फूल-खील रखे| मूली| तिल| गुड़| और गहर-गम्भीर स्वर में कहा- मॉओं-बहनों, लोढ़ी का भारी भरा त्यौहार सदा-सदा ! त्रिचौलिवाला थाल निक्की बेबे के हाथ में दे 'भरी' के अम्बार को अंगार दिया| बधाईयाँ बहनों, बधाइयाँ ! लो पांधाजी, पहले अपने महँगे जातको की भरी डाले|

लो जी, यह नौनिहालसिंह की !

यह चिडों के धोत्रे की !

यह खुल्लरों के पौत्र की !

यह सुरजनदास के पुत्र की !

निक्की बेबे ने सतपुत्री वीरांवाला को आगे कर दिया- चल धिये, लस्सी डाल परिक्रमा कर अग्नि-देवता की|"[35]

हमारी संस्कृति का एक अहम हिस्सा खान-पान एवं रहन-सहन है| पंजाब अपने खान-पान के लिए काफी प्रसिद्ध है| यहाँ रह रहे सभी समुदाय में लगभग एक सी समानता दिखाई देती है| खान-पान को इस एक उदाहरण से समझा जा सकता है - "मक्का के फूल| गुड़ की भेलियाँ| रेवड़ियाँ| चावल-तिल की त्रिचौल| कच्ची लस्सी के गडुवे और मूलियों-भरी पच्छियाँ|.... मसाले का गुड़ और

उड़द की दाल की पिन्नियाँ|"[36] ये सभी मिठाइयाँ सिर्फ मीठे का प्रतीक भर नहीं है बल्कि यह पूरे पंजाब की संस्कृति उसके खान-पान का प्रतीक है|

किसी भी संस्कृति में पहनावा उसके रहन-सहन का प्रमुख हिस्सा है| पंजाबियों का भी अपना पहनावा उसकी अलग पहचान बनाता है| पंजाब फुलकारी के काम के लिए जाना जाता रहा है| उपन्यास में ऐसे कई चित्र है जिसके कुछ अंश का आगे उदहारण के तौर पर वर्णन किया गया है - "मेहरसिंह की घरवाली छुहारेवाली बूटी का जोड़ा पहन निक्का-निक्का शरमाए| सुनहरी भरावे बाग फुलकारियाँ ओढ़े देवरानी के साथ शाहनी पहुँची तो सभा का सिंगार बन-बन फबने लगी|"[37]

सामाजिक-सांस्कृतिक संरचना में त्योहारों का महत्वपूर्ण स्थान है, विशेषकर ग्रामीण इलाकों में| गाँव के लोगों में किसी भी त्यौहार को मनाने की उत्सुकता उस पर्व के आने के कुछ दिन पहले से ही उसकी तैयारी की प्रक्रिया में दिखाई पड़ती है| इस उपन्यास में भी लेखिका ने ऐसे कई त्यौहारों का जिक्र किया है जो वहां की संस्कृति को दिखाता है| इस उपन्यास में दीवाली के पर्व को बड़े ही सुन्दर से लेखिका ने अपने पात्रों के माध्यम से दिखाया है| आगे उदाहरण के तौर पर एक सन्दर्भ का वर्णन किया गया है - "शाह-शाहनी का पहला बच्चा एवं उनके बच्चे लाली की पहली दीवाली और घर काफी रौनक का माहौल है| एक तो दीवाली और दूसरा इतने समय बाद घर को चिराग मिला मानो घर का अंधेरा अब मिटा हो|"[38] दीवाली के प्रसंग यहाँ ज्यादा नहीं है लेकिन इस एक प्रसंग से हिन्दू संस्कृति को भलीभांति समझा जा सकता है| यह त्यौहार हिन्दुओं में प्रकाश का प्रतीक है और इस प्रसंग का यहाँ होना शाहनी के जीवन में जो अँधेरा था उसमें यह बच्चा उसके जीवन में उजाले का प्रतीक के तौर पर देखा जा सकता है|

संस्कृति मनुष्य एवं समाज दोनों को सम्पूर्णता प्रदान करती है| संस्कृति ही है जो मानव को परिवार, परिवार को समूह, एवं समूह को समाज से जोड़ती है, अतः संस्कृति के बिना इसे समझना नामुमकिन है| अतः संस्कृति समाज को हरेक स्तर पर समझाने का कार्य करती है| 'कलिकथा वाया बाइपास' में लेखिका कलकत्ता आये मारवाड़ी परिवार की कथा कहती है, जहाँ एक

साथ दो संस्कृतियों को साझा कर सुन्दर चित्र प्रस्तुत करती हैं| उपन्यास में अपने पात्रों के माध्यम से लेखिका दो संस्कृतियों के मेलजोल की सच्ची तस्वीर खींचती हैं|

नासिरा शर्मा हिंदी साहित्य में गिने-चुने गणमान व्यक्तित्व के तौर पर सराही जाती रहीं हैं| नासिरा शर्मा आज एक आदर्श लेखिका के रूप में प्रतिष्ठित हैं| मुस्लिम परिवार में जन्म और हिन्दू परिवार में विवाह इनके जीवन के दो संस्कृतियों के मिले सुन्दर रूप को प्रस्तुत करता हैं| अतः इन दोनों संस्कृतियों के मिले-जुले रूप को हम इनके साहित्य में भी भली-भांति देख सकते हैं| संस्कृति कहने से आशय हमारे खान-पान, रहन-सहन, रीति-रिवाज, संस्कार से है| हर धर्म में लोगों के जीवन जीने का तौर तरीका व् अनुशासन अलग-अलग होता है| यहाँ सभी उपन्यासों में इस जीवन शैली को देखा जा सकता है| लेखिकाओं ने अपने-अपने उपन्यासों में इन शैली के सभी रूपों को दिखाया है जिसके कुछ प्रसंगों को उदहारण के तौर पर आगे दिखाने का प्रयास किया गया है|

नासिरा शर्मा के उपन्यास 'पारिजात' में हमें दो धर्मों (हिन्दू-मुस्लिम) के मिले-जुले सांस्कृतिक रूप देखने को मिलते हैं| एक तरफ हिन्दू संस्कृति के खान-पान और रहन-सहन की झलकियाँ हैं, तो दूसरी तरफ मुस्लिम संस्कृति की| मेला इन्हीं संस्कृतियों की झलक प्रस्तुत करता है - "वसंत का मेला लगा हुआ है| सभी औरत-मर्द वसंती रंग के कपड़े पहने हैं|"[39] वहीं प्रभा दत्त ऐलेसन को दीवाली पर दीप जलाने कहती हैं जो हिन्दू पर्व-त्योहार की अपनी संस्कृति को दर्शाता है - "यह लो दिये| आज दीवाली है और तुम इस घर की होने वाली बहू| तुम्हारे दम से यह घर हमेशा रौशन रहेगा|"[40] आगे इस उपन्यास में मुस्लिम खान-पान का वर्णन कुछ इस प्रकार से है - "बचपन में मुझे याद है, अमीरों और रईसों के यहाँ मेवों से बना सालन गोश्त या किसी न किसी तरकारी के साथ पकाया जाता था, जिससे एक नया, बिलकुल नया मजा वजूद में आ गया जो आज भी रायज है| जबकि अमीरों के यहाँ तरकारी सादी पकती थी, मगर तरकारी और सालन का नया-नया तजुर्बा रोज किचन में होता, कभी अरबी गोश्त, भिंडी कीमा, पालक गोश्त, दोप्याजा,

अब देखो गफ़ूर ने आज गोश्त और करमकल्ला क्या मज़े का पकाया है|"[41] पान खाने का चलन लगभग सभी धर्म में एक सा देखा गया है|

'पारिजात' गंगा-जमुनी संस्कृति पर लिखा गया उपन्यास है| इस संस्कृति के रहन-सहन और खान-पान को एक साथ एक ही चित्र में लेखिका ने कुछ इस प्रकार से लिखा है - "गंगा-जमुनी बर्तनों का तब कितना रिवाज था| मुरादाबादी बर्तनों को छोड़ो, सादे तांबे के बर्तन घर-घर रायज थे, फिर ययहागंज का बाजार पीतल से चमचमाता उभरा और उसने धीरे-धीरे करके तांबे और चाँदी के बर्तनों का चलन ख़त्म कर दिया| चाँदी के पानदान से तांबे के पानदान, फिर पीतल की पनदनिया आई, फिर पानदान ही घरों से गायब हो गए| केवड़े में बसा कत्था| मलाई जैसा चूना, जिसमें मोती और सीप का चूरा मिलाया जाता था| ऊपर से पान का वह सब्ज पत्ता जो हर शहर,हर गाँव के घर-घर में दिन-भर चलता था| इसलिए कहा जाता था कि बर्गे सब्जअस्त तोफ़ा-ए-दरवीश...| पान, जिसको हर ख़ास व आम अपने मेहमानों के आगे पेश करता था|... खुशबूदार किवाम, चाँदी के वर्क चढ़ी तंबाकू की गोलियाँ तरह-तरह की शीशियों में भरी होतीं| इन पानों के संग उनका इस्तेमाल होता| पान की गिलौरी मुँह में जाते ही मक्खन की तरह घुल जाती|"[42] मुस्लिम संस्कृति में पहनावे को लेकर बहुत तरह की विविधता है जिसमें बुरका और जेवर महत्वपूर्ण माना गया है| उपन्यास में लेखिका ने 'गूश' एक आभूषण की व्याख्या करते हुए उसका बारीकी से वर्णन किया है - "उन्हें कई ज़ेवरों के जाने का बड़ा दुःख था| उनके पास एक ज़ेवर 'गूश' था यानी चाँदी या सोने का बना बनावटी कान, जिसमें लौ की तरह छेद होते, जिसमें जडाऊ बालियाँ, गूशवारे लटकते होते, बस उसको औरतों को अपने कान में अटकाना होता था| इसका चलन महलसरा में बड़ा चला|... एक गूश में आठ-आठ ज़ेवर थे, छह-छह बालियाँ, एक लौंग और झुमका|"[43]

मुंडन हिन्दू धर्म में एक रीति की तरह है जो बच्चे के जन्म के पश्चात् किया जाता है| नासिरा शर्मा अपने उपन्यास में मुंडन जैसी हिन्दू परंपरा को कर्नल के पोते के मुंडन के द्वारा कुछ ऐसे पेश करती हैं - "जाड़े की उस गुनगुनी दोपहर को कर्नल बी.एन.बाली के घर में पोते के

मुंडन के अवसर पर 'बड़ों की कड़ाही' चखने सारी मोहियाल बिरादरी जमा थी| दो कड़ाहियाँ हलवों से भरी चढ़ाई गई थीं|"[44]

सगाई हिन्दू परंपरा में एक रस्म है जो विवाह से पूर्व मनायी जाती है| 'पारिजात' के अंत में रोहन और रूही के माध्यम से इस रीति को दिखाया गया है - "शोभा ने अँगूठी की डिबिया खोली| रोहन और रूही ने एक-दूसरे को अँगूठी पहनाई| बधाईयों के साथ मोगरे और गुलाब की पंखुड़ियाँ दोनों पर बरसीं|"[45] मृत्यु के पश्चात् की विधि मुस्लिम समाज में सेवुम के रूप में और हिन्दू समाज में क्रिया-कर्म के रूप में मनाया जाता है| जहाँ रोहन और प्रह्लाद दत्त प्रभा दत्त की अस्थियों को हरिद्वार जाकर विसर्जित करते हैं वहीं मिर्जा जफ़र का पोता के मृत्यु के पश्चात् उसका सेवुम मनाया जाता है - "मर्सियाख्वा और सोज पढ़ने वाले आ चुके थे|... मिर्ज़ा जाफ़र का बड़ा पोता गोमती में नहाते हुए डूब गया था| आज उसका सेवुम था|"[46]

त्योहारों की बात करें तो नासिरा जी अपने उपन्यास में दोनों धर्मों में मनाये जाने वाले पर्व का उल्लेख करती हैं| एक तरफ दीवाली, जन्माष्टमी है तो दूसरी तरफ मुहर्रम दो अलग धार्मिक समुदाय के अलग परंपरा और संस्कृति का सुन्दर और सजीव चित्र लेखिका यहाँ खींचती हुई नज़र आती हैं| उपन्यास में लेखिका लिखती हैं - "तस्वीर में पांच-छह साल के रोहन और काज़िम फ़क़ीर बने खड़े थे| सब्ज कुर्तों पर कपड़े की बनी झोली डली थी| उनकी फैली हथेली पर पैसे रखे जा रहे थे| तस्वीर के नीचे रोहन के बाबा के दस्तख़त थे और तारीख़ लिखी थी- पांच मोहर्रम|... चूँकि हजरत हुसैन की आल-औलाद कर्बला में तीन दिनों तक भूखे-प्यासे रहे थे| उसी की याद में यह रस्म होती है|"[47] वहीं एक और जगह मुहर्रम को थोड़ा और विस्तार से दिखाते हुए लेखिका लिखती हैं कि - "आठवीं मोहर्रम से पायको के झुंड गाँवों से चलकर अपने-अपने इलाक़े के इमामबाड़ों की ज्यारत करते पूर्वी उत्तर प्रदेश में फैल गए थे, जिनमें हलवाहे, चरवाहे, जुलाहे,दस्तकार और मजदूर थे, जो मन्नत मानकर हरा कुर्ता, सफ़ेद धोती पहने, सर पर हरी पगड़ी लगाए, जो ख़ास अंदाज से कोन के रूप में लपेटी जाती थी और कमर में छोटी-छोटी घंटियाँ

बांधे सीधी चल न चलकर ये पायक उछल-उछलकर चलते हैं| बैठना, ठहरना उनके लिए गुनाह समझा जाता है| तीन दिन तक अन्न का दाना जुबान पर नहीं रखते| अपने मुसलमान भाइयों की तरह वह मातम या नौहा नहीं पढ़ते, बल्कि भारी ऊँची आवाज़ से नारे लगाते हैं- 'या हुसैन ! या हुसैन !"[48]

हिन्दू धर्म में दीवाली प्रकाश का प्रतीक है| यह त्यौहार अंधकार पर प्रकाश के विजय के प्रतीक के रूप में मनाया जाने वाला एक खास उत्सव है| इसकी शुरुआत श्री राम के वनवास ख़त्म होने और रावण पर विजय प्राप्त कर घर वापसी के उपलक्ष के रूप में दीप जलाकर हुई थी जिसे आज हम अपनी संस्कृति का एक खुबसूरत हिस्सा के रूप में जानते हैं| इसका वर्णन उपन्यास में कई जगहों पर मिलता है - "दोनों सखियों ने दीये थालियों में सजाए और उन्हें सजाने के बाद सुमित्रा ने अनार निकाले और एक के बाद एक जलाती उनसे फूटते-बरसते आग के फूलों को देखती रही| फुलझड़ी, मेहताब, आफ़ताब, जलेबी, चर्खी क्या कुछ नहीं जलाया दोनों ने और ऊँचे कहकहों से जैसे सारे अवसादों को धो डाला|"[49] आगे एक अन्य प्रसंग में दीवाली को नजीर की नज्म के द्वारा लेखिका ने क्या खूब अंकित किया है - "हर एक मकां में जला फिर दिया दीवाली का, हर एक तरफ़ को उजाला हुआ दीवाली का / खिलौने खेलों बतासों का गर्म है बाजार, / हर एक दुका में चिरागों की हो रही है बहार|"[50]

जीवन में विद्यमान समस्त वस्तुओं का व्यवहारिक तौर पर अभ्यास ही संस्कृति है| लेखिकाओं के उपन्यासों में सांस्कृतिक परिस्थितियों के विभिन्न आयाम रहन-सहन, खान-पान, रीति-रिवाज, पर्व-त्योहार आदि का वर्णन देखते ही बनता है| अतः अध्यनोपरांत यह आशय स्पष्ट होता है कि लेखिकाओं ने एक विस्तृत फलक को अपने लेखन का हिस्सा बनाया है|

2.3 धार्मिक परिस्थिति

"धर्म शब्द संस्कृत भाषा के 'धृ' से बना है जिसका अर्थ है धारण करना।"[51] धर्म को सामान्यतः कर्तव्य के रूप में लिया जाता है। मनुष्य अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए अपने आचरण के द्वारा कर्तव्य और व्यव्हार को नियंत्रित और निर्देशित करता है। धर्म इसी धारणा को धारण किये हुए है। कुछ विद्वानों ने अपने ढंग से धर्म को परिभाषित किया है-

मैक्समूलर ने अपनी किताब 'साइंस ऑफ रिलिजन' में धर्म को "मनुष्य द्वारा असीम को समझ सकने की क्षमता प्रदान करने वाली मानसिक योग्यता या वृत्ति" बताया है।

मैथ्यू अर्नाल्ड - "भावना से रंजित नैतिकता" को ही धर्म मानते हैं।

दुर्खीम - "धर्म पवित्र वस्तुओं से संबंधित विश्वासों और आचरणों की समग्रता है जो इन पर विश्वास करने वाले को एक नैतिक समुदाय के रूप में संयुक्त करती है।"

गिलिन - "धर्म के समाजशास्त्रीय क्षेत्र के अंतर्गत एक समूह में अलौकिक से संबंधित उद्देश्यपूर्ण विश्वास तथा इन विश्वासों से संबंधित बाहरी व्यवहार, भौतिक वस्तुएँ और प्रतीक आते हैं।"

फ्रेजर लिखते हैं- "धर्म से मेरा तात्पर्य मनुष्य से श्रेष्ठ उन शक्तियों की संतुष्टि अथवा आराधना करना है जिनके बारे में व्यक्तियों का विश्वास हो कि वे प्रकृति और मानव-जीवन को नियंत्रित करती है तथा उनको निर्देश देती है।"[52]

डब्लू के. राईट के अनुसार "धर्म वह प्रयास है जिसमें समाज से मान्यता प्राप्त मूल्यों का कुछ विशिष्ट क्रियाओं द्वारा इस विश्वास के साथ संरक्षण किया जाता है कि ये क्रियाएँ किसी मानवेतर शक्ति का आह्वान करती हैं जिनपर निर्भर रहा जा सकता है।"[53]

राधाकृष्ण अपनी किताब 'धर्म और समाज' में लिखते हैं- "धर्म वह अनुशासन है जो अंतरात्मा को स्पर्श करता है और हमें बुराई, कुत्सित्ता से संघर्ष करने में सहायता देता है।"[54]

धर्म को परिभाषित करते हुए आंबेडकर लिखते हैं- "धर्म शब्द का प्रयोग मैं ब्रह्मविज्ञान के रूप में करता हूँ| ....प्राचीनकाल से ही ऐतिहासिक दृष्टि से जिनकी चर्चा की जाती रही है, ऐसे ब्रह्मज्ञान दो तरह के हैं - पौराणिक ब्रह्मज्ञान और लौकिक ब्रह्मज्ञान|... मेरे अनुसार ब्रह्मविज्ञान का अर्थ है, नैसर्गिक ब्रह्मविज्ञान जो ईश्वर और ईश्वरीय उपदेशों का सिधांत है|... आगे इसी क्रम में बाबा साहेब लिखते हैं कि - "पारंपरिक और रूढ़ अर्थ में नैसर्गिक ब्रह्मविज्ञान तीन तरह के सिधांत को प्रतिपादित करता है- पहला ईश्वर का अस्तित्व है और वह विश्व का निर्माता है| दूसरा प्राकृतिक रूप में होने वाली सभी घटनाओं पर ईश्वर का नियंत्रण है| और तीसरा ईश्वर अपने सभी सार्वभौमिक नैतिक नियमों द्वारा मानव जाति पर शासन करता है| इन सभी को ध्यान में रखते हुए मेरी मान्यता है कि धर्म का अर्थ दैवी शासन की आदर्श योजना का प्रतिपादन करना है, जिसका उद्देश्य एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था बनाना है, जिसमें मनुष्य नैतिक जीवन व्यतीत कर सके|"[55]

ऊपर लिखी गई परिभाषाओं को देखते हुए कह सकते हैं कि धर्म समाज का एक महत्वपूर्ण अंग है, जो मनुष्य को नैतिक एवं आदर्श बनाता है| इसे श्रध्दा, भक्ति और आस्था के रूप में जोड़कर देखा जाता है| धर्म ही है जो मनुष्य को ज्यादा नैतिक बनाये हुए है| धर्म जहाँ एक तरफ ऊँचे आदर्श, मूल्यों की रक्षा, उच्च विचार एवं सदाचारी प्रवृत्ति की ओर हमें चलने को प्रेरित करता है, वहीं इसको न मानने वाले, दुराचारी पथभ्रष्ट व्यक्ति समाज में वैमनस्य और सांप्रदायिक जहर फैलाने का काम करते हैं| धर्म लोगों को सिर्फ कर्तव्य मार्ग पर चलकर मनुष्यता की रक्षा करने वाला होता है| हर सन्दर्भ में इसकी यही एक सटीक और पूर्ण परिभाषा है|

धर्म कहने से हमारे मष्तिस्क में सबसे पहले जो छवि उभरती है वह है ईश्वरीय छवि| जहाँ धर्म का ईश्वर से सीधा संबंध देखा जा सकता है| धर्म समाज में अनुशासन की तरह है, जो समाज को एक सूत्र में बांध कर रखता है| धर्म को एक दूसरी प्रवृत्ति से जोड़ा जाता है जिसे हम आस्था कहते हैं| इस तरह आस्था को लोगों में कभी सगुण साकार की उपासना अर्थात् मूर्तियों की पूजा-

अर्चना के तौर पर तो कभी निर्गुण निराकार की अराधना के रूप देखा जाता है| धर्म ईश्वर के साथ जुड़ी उस आस्था का नाम है, जहाँ व्यक्ति मन में श्रद्धा और भक्ति भाव उत्पन्न होता है| अतः इस भक्ति भाव और श्रद्धा को हम कई रूपों में व्यक्त करते हैं| ईश्वर की उपासना पद्धति को लेखिकाओं ने अपने उपन्यास में कुछ इस तरह से लिखा है|

'जिंदगीनामा' एक ग्रामीण अंचल की कथा है, जिसमें ईश्वर के प्रति जितनी श्रध्दा दिखलाई पड़ती है उतना ही अन्धविश्वास भी| गाँव के लोग ज्यादा पढ़े-लिखे नहीं होते हैं, अतः इन विषयों पर तर्क-वितर्क से इनका जीवन अछूता रहता है| उपन्यास जिस समय की कहानी कहता है उस समय में काफी कम लोग ही शिक्षित हो पाते थे| ऐसे में उनका ईश्वर के प्रति आस्था का अंधविश्वास में परिणत हो जाना सामान्य था| उपन्यास में ऐसे ही कुछ अन्धविश्वास से जुड़े पहलूओं को प्रसंगों के माध्यम से लेखिका ने प्रस्तुत किया है, जो आगे वर्णित है - "चाची, मैं कुटिया गई थी माथा टेकने| भाईजी ने प्रकाश किया, वाक निकाला| धूल माथे लगाई तो झोली में यह फूल आ गिरा| समझ ले चाची, मेरे हक़ में कोई अच्छी बात होनेवाली है|"[56]

ऐसे प्रसंग यह दर्शाते हैं कि समाज में भगवान को लेकर कितनी श्रध्दा है और कितनी अंधभक्ति| विश्वास को अंधविश्वास में बदलने में ज्यादा समय नहीं लगता ज्यों ही इंसान की इच्छा महत्वाकांक्षा में बदल जाती है, उनका पूरा न होने का डर ईश्वर के प्रति माँगने का भाव उसे इस तरफ लाकर खड़ा कर देता है| शाहनी का माँ नहीं बन पाना और ईश्वर से मन्नत उसके इसी रूप को दर्शाता है - "मन्नत माँग-दिल की मुराद पूरी हुई तो शेख सद्दों के दरबार चिराग़ जलाऊँगी| साहनी ने.... खानकाह की दहलीज पर माथा टेका, तेल के लिए पैसे रखे|"[57] शादी-विवाह हिन्दू धर्म की एक ऐसी प्रथा है जो बिना पंडित और मंत्र के संपन्न नहीं माना जाता है| विवाह ठीक करवाने से लेकर विवाह के पश्चात् घर के शुभ-मंगल सभी तरह के कार्यों में इनकी उपस्थिति अनिवार्य मानी जाती है| आगे ऐसे ही एक प्रसंग का उल्लेख किया गया है - "शाहनी ने दूध का कटोरा पांदाजी के आगे किया- मुहँ जूठा करो महाराज ! क्या कुल्लूवाल वालों ने कुछ पूछा-ताछा

? भगवाना कोई लग्ग-लपेड नहीं रखता| बात सब खोल दी| लड़की भली है और शाहों की छाँह में... 'बच्ची, गऊ का घी डाल दूध और ले आ|... पांदाजी ने बड़ी ठंडी निस्संग आवाज़ में कहा- शाहनी, जरा गिरी-छुहारा डाल धीमी-धीमी आँच तत्ता होने दो दूध| इतने कुछ सुना दूँ :

श्री गणेशाय नमः

पीताम्बरधरं विष्णुं कृष्णवर्ण चतुर्भुजम

प्रसन्नवदनं ध्ययेत्सवर्विघ्नोपशान्तये |....

दीपक की लौ भगवान पांडे के गले से विष्णु सहस्त्रनाम का उच्चारण सुन कुछ ऐसा सुन पड़ा कि कोई अबूझे दैवी वचन दोनों लोकों को बांधे हुए हों| जय-जय संस्कृत महरानी, अपने जैसे मूर्ख जन चाहे कुछ न समझें-बूझें, फिर भी सुनकर मन के अन्दर-बाहर चान्नन ही चान्नन|"[58]

इस प्रकार यहाँ लेखिका ने धर्म के व्यावहारिक पक्ष की जीवंतता को सहज रूप से दिखाया है| किसी भी समाज के धर्म को यदि समझना हो तो उस समाज के व्यावहारिक पक्ष को देखना ज्यादा जरूरी है| अतः उपन्यास में धर्म-सुधार आंदोलनों को भी दिखाया गया है| धर्म में व्याप्त दुर्गुण की तरफ इशारा करने का तात्पर्य उसके व्यावहारिक पक्ष में सुधार की बात करना है|

अन्धविश्वास धर्म में मानसिक कमजोरी का प्रतीक होता है| हीन भाव से ग्रस्त व्यक्ति जब अपनी अधूरी इच्छा को पूरी करने के लिए धर्म का सहारा लेता है तो उसका झुकाव ज्यादातर समय धार्मिक आडम्बरों की तरफ होता है| समाज में लोगों ने ऐसे कई धार्मिक आडम्बर अपनाए हुए हैं जो धर्म के अनुशासन को अन्दर से खोखला कर रहा है| धर्म के नाम पर ऐसे कई संस्थागत प्रयोग समाज लम्बे समय से अपनाता आया है जिसमें जन्मकुंडली दिखाना, पत्थर पहनना, दुआ पूरी होने पर चढ़ावा देना आदि| 'कलिकथा : वाया बाइपास' में भी कुछ ऐसे प्रसंग है जो इस तरह के भाव को दिखाता है| किशोर बाबू के लड़के की उंगलियों में कई तरह के पत्थर की अंगूठी इसी तरह के धार्मिक प्रयोग का प्रमाण है - "किशोर बाबू के लड़के ने अपनी दस अंगुलियों में से छः

अंगुलियों में तरह-तरह के पत्थरों की अंगूठियाँ पहन रखी थीं|"[59] पूरा परिवार जहाँ किशोर बाबू के व्यवहार को देखते हुए उसे नियति का चक्र समझकर उनके बारे में सोचना छोड़ देता है, वहीं अपने पति किशोर बाबू को लेकर उनकी पत्नी की चिंता धर्म के प्रति श्रध्दा को दर्शाता है| "कभी-कभार उनकी पत्नी किसी पंडित को उनकी जन्मकुंडली दिखा कर कुछ दान-वान या पूजा-पाठ करवाती रहीं|"[60]

'मिलजुल मन' में धार्मिक कट्टरता से उत्पन्न स्थिति को लेकर लेखिका ने कई चित्र प्रस्तुत किये हैं| भारत-पाक बंटवारे से उत्पन्न परिस्थिति ने पूरे देश को दहला कर रख दिया था| 1947-48 के बाद मुल्क में जगह-जगह हिन्दू-मुस्लिम दंगे होते रहते थे| किसी भी छोटी सी बात पर लोगों की भावना आहत हो जाती और लोग मार काट पर उतर आते| ऐसे ही कुछ संवेदनशील प्रसंग का वर्णन लेखिका अपने उपन्यास में भी करती हैं - "आमतौर पर निहायत मामूली वाकया वजह बनता था| हिंदू मंदिर के आगे से मुहर्रम का ताजिया ठीक आरती के वक्त निकल गया| बीच बाज़ार पसरी गाय के ऊपर से जो साइकिल सवार निकला, मुसलमान था| अज़ान के वक्त मुसलमान के सामने शंख बजा दिया| फिल्म में खलनायक का नाम मुहम्मद रखने वाला हिंदू था वगैरह वगैरह|"[61] अतः धर्म के प्रति आस्था समाज को संपन्न और स्वस्थ करता है पर धर्म के प्रति कट्टरता समाज को अपाहिज और दूषित बनाता है|

अपनी किताब चिंतामणि में रामचंद्र शुक्ल भक्ति को हृदय से जोड़कर उसकी विस्तृत चर्चा करते हुए 'श्रद्धा और भक्ति' शीर्षक निबंध में लिखते हैं कि "श्रद्धा और प्रेम के योग का नाम भक्ति है|".... "हमारे यहाँ भक्ति विधान के अंतर्गत श्रवण, कीर्तन, स्मरण, सेवा, अर्चना, वंदन, दास्य, सख्य और आत्म-निवेदन ये नौ बातें ली गई है|"[62] पारिजात में भगवान के प्रति ऐसे ही एक तरह के भक्ति भाव को लेखिका ने प्रह्लाद दत्त के द्वारा कुछ ऐसे दिखाया गया है - "दादी के पास हाथ जोड़, पालथी मार बैठकर वह दादी के साथ मिलकर गाते थे : मेरे प्रभु की हो जाए

कृपा / शीतल हो जाऊँगी / मन का अपने मंदिर बनाकर पूजा कर लूँगी / ठाकुर पा लूँगी| / ए री ...."[63]

हर धर्म में ईश्वर के प्रति भक्ति प्रकट करने की अपनी अलग शैली होती है| ऐसे ही हिन्दू धर्म को मानने वाले भी कई तरह से अपने ईष्ट के प्रति श्रद्धा एवं भक्ति भाव प्रकट करते हैं| भगवान की आरती इसी तरह के भाव को व्यक्त करता है| 'पारिजात' उपन्यास में भी इस तरह के वाकया को दो बार दिखाया गया है| पहला - "गंगा की आरती शुरू हो गई थी| वातावरण में गूँजती आवाज़, आग की लपट, सामग्री की गंध और भीड़ के बीच से बहती गंगा|"[64] दूसरा - "प्रभा घर में बनाए मंदिर के आगे आरती की थाली लिए बैठी है|"[65]

भारत एक ऐसा राष्ट्र है जो विविधताओं के लिए जाना जाता है| यहाँ हर धर्म और जाति के लोग हैं और सबकी अपनी-अपनी मान्यताएं हैं| अलग-अलग विचार होने के बावजूद इनमें सोहार्द और प्रेम है| धर्म हमें असल में यही सिखाता है कि हम किसी भी तरह के पक्षपात से खुद को दूर रखें, नैतिक मूल्यों का पालन करें और आपस में मित्रवत भाव रखें| यह हमें ईर्ष्या, द्वेष और अनैतिक कार्यों से दूर रखता है| अतः धर्म सद्गुणों से बना एक तरह का तंत्र है जिसमें लोग अपना जीवन अनुशासन पूर्वक व्यतीत करते हैं| इस सन्दर्भ में राधाकृष्णन लिखते हैं कि - "विचारों की कोई भी गंभीर साधना विश्वासों की कोई भी खोज, सद्गुणों के अभ्यास का कोई भी प्रयत्न, ये सब उन्हीं स्रोतों से उत्पन्न होते हैं, जिनका नाम धर्म है|"[66]

'पारिजात' उपन्यास में ऐसे कई प्रसंग को लेखिका ने लिखा है जो यह दर्शाता है कि धर्म की असल परिभाषा क्या है, और क्या होनी चाहिए| इस उपन्यास में ऐसे कई प्रसंग हैं जो धार्मिक सोहार्द और प्रेम का सुन्दर चित्र खींचता है - "इलाहबाद का घर है| जन्माष्टमी का दिन है| प्रभा बड़े चाव से मोनिस, रोहन और काज़िम को कृष्ण, राधा, बलराम की तरह सजा रही है| तीनों के बदन नील-सफ़ेद पुते हैं, पीली धोती है और माथे पर रखे सुनहरे ताज सजा रही है|"[67]

धर्म का एक दूसरा पक्ष है जिसे धर्मान्धता या रूढ़िवादिता के रूप में समझा जा सकता है| अंधविश्वास कहने से तात्पर्य है जीवन में शिक्षा की कमी| जब व्यक्ति किसी की बातों पर आँख बंद कर चलने लगता है तो ऐसी विवेकहीन स्थिति से उत्पन्न परिस्थिति को अंधभक्ति कहा जाता है| ऐसा नहीं है कि सिर्फ कम पढ़े-लिखे लोग इसकी चपेट में आते हैं अन्धविश्वास ने एक से बढ़कर एक पढ़े लिखे लोगों को भी अपनी तरफ आकर्षित किया है| पारिजात उपन्यास में रोहन एक पढ़ा लिखा और आज के ज़माने का युवा है| रोहन का अंग्रेजी कल्चर में रुझान और विदेशी बीबी उसके शिक्षित और परिपक्वता का प्रमाण होने के साथ-साथ आधुनिक युवा का प्रतीक भी है| परन्तु आगे के जीवन में हुए उथल-पुथल ने रोहन जैसे शिक्षित और विवेकशील व्यक्ति को भी अंधविश्वास के चपेट में ले लेता है| रोहन को जीवन के उतार में रह-रह कर उस ज्योतिष की बात याद आती है - "आपके और आपकी पत्नी के ग्रह सही नहीं हैं...उससे अलग होना ही आपके लिए ठीक होगा...."| आपके भाग्य में औरत का सुख नहीं है| उसने बड़ी कुटिल मुस्कान के साथ कहा था, फिर हंस कर बोला था, उसके भी उपाय हैं|"[68] सही मायनों में देखा जाय तो दोनों के वैचारिक मतभेद ने दोनों को एक-दूसरे से अलग कर दिया था|

परिवर्तन प्रकृति का नियम है और यह सब पर बराबर से लागू होता है| धर्म भी समय-समय अपना रूप बदलता रहा है जिसका एक पूरा इतिहास है| प्राचीन समय में देखें तो धर्म अपने नैतिक मूल्यों और कर्तव्यों का प्रतिरूप हुआ करता था, किन्तु जैसे-जैसे समय बदलता गया मूल्य और नैतिकता की प्रकृति बदलती गयी| आज जब हम धर्म की बात करते हैं तो इसके बदले हुए रूप पर पड़े प्रभाव का प्रमुख कारण राजनीति को पाते हैं| आज धर्म लोगों के स्वार्थ पूर्ति का महज एक माध्यम बनकर रह गया है| इससे समाज में फैले अराजकता को समय-समय पर देखा और झेला गया है| कभी इसके दुरूपयोग का छोटा मंजर तो कभी बड़ा और वीभत्स रुप देखा गया| इसके छोटे रुप के तौर पर हमें अन्धविश्वास, जादू-टोना, एक-दूसरे को कमतर और छोटा दिखाना आदि नज़र आता है, तो वहीं इसके बड़े स्तर पर किये गए दुरूपयोग ने समाज को कई हिस्सों में

न सिर्फ बाँट दिया बल्कि साम्प्रदायिकता का विभत्स मंजर दिखा गया| पुरस्कृत महिला साहित्यकारों के उपन्यासों में धर्म से संबंधित कई तरह की समस्याओं और उसके यथार्थ पक्ष को दिखाने की कोशिश की गयी है| इसमें सांप्रदायिक वैमनस्य और सद्भाव दोनों को दिखाया है| आगे इसका वर्णन किया गया है|

उपन्यास में एक ऐसा प्रसंग भी है जो इन्सान की छोटी बुद्धि और वैमनस्य भाव से उत्पन्न नफरत को भी दिखाता है| जिसे लेखिका ने कुछ ऐसे दर्शाया है - "इन मुसलमानों के साथ उठना-बैठना कम करो| इनका साथ हर तरह से नुकसान में ख़त्म होता है| मैं तो दस हाथ दूर भागता हूँ इनसे, मगर तुम तो कमाल के लोग हो, इनका पीछा ही नहीं छोड़ते|"[69]

नासिरा शर्मा अपने उपन्यास में कई जगहों पर धार्मिक सद्भाव को तीनों मित्रों के माध्यम से प्रकट करती हैं - "प्रह्लाद दत्त, बशारत हुसैन, जुल्फिकार अली न केवल सहपाठी थे, बल्कि उनके परिवार बरसों से एक-दूसरे को जानते थे|"[70] इनका आपसी संबंध कितना निःस्वार्थ और कोमल था तथा जो मानवता की भूमि पर चल रहा था| आगे इस तरह के भाव को एक उदाहरण से समझा जा सकता है - "दोस्त के एहसास को प्रह्लाद दत्त समझते थे| अपने एक साल के बेटे रोहन को उन्होंने दूसरे दिन नुसरतजहाँ की गोद में डालकर कहा था, भाभी, आप इसको पालें|"[71] लेखिका ने अपने उपन्यास में जगह-जगह मानवता को धर्म से ऊपर रखकर दिखाया है| विभाजन की त्रासदी कौन नहीं जनता पर उस समय में भी कुछ ऐसे वाकया हुए जो ऐसे माहौल में सद्भाव की भावना से भिगा हुआ था| कुछ ऐसे ही स्मरण को इस उपन्यास में बी.एन. बाली सुनाते हुए नज़र आते हैं - "बँटवारा आफत की तरह हमारे सिरों पर टूटा था| जान-माल बचाकर हम भाग रहे थे| अजीब अफरा-तफरी का माहौल था| दोस्त-दुश्मन पहचान में नहीं आ रहे थे| रावलपिंडी के पास पेरयांरायजादा गाँव था| हमारे पिता रायजादा गणेश दास बाली बांकी साकिनों के साथ पास के गाँव की तरफ भागे| वह इत्तेफ़ाक से सय्यदों का गाँव था| ...पिंड सय्यदा के लोगों ने हमें हाथोंहाथ लिया, पनाह दी, प्यार दिया और सबसे बड़ी बात यह कि एक कुआँ ख़ास तौर से हमारे लिए

अलग से महफूज कर दिया, ताकि हम बिना किसी रोक-टोक के उस कुएँ का पानी इस्तेमाल कर सकें|"[72]

मित्रता और प्रेम ये सभी धर्म से अलग अपनी पहचान रखते हैं, जो मनुष्य होने की परिभाषा गढ़ता है| ऐसे ही एक मित्रवत प्रेम का उदाहरण आगे लेखिका प्रस्तुत करती हैं जो धर्म का सच्चा रुप प्रस्तुत करता है - "मैं पाकिस्तानी होकर हिंदुस्तानी था और वह हिंदुस्तानी होकर पाकिस्तानी हो गए| हम जुदा हुए तो जज्बात की शिद्दत में कुछ बोल न सके| मेरे पास अपने अजीज़ दोस्त को देने के लिए कुछ न था| मेरी समझ में जब कुछ न आया तो मैंने अपने सर के सफ़ेद बालों का एक गुच्छा सर से नोच यादगार के तौर पर उनके हवाले कर दिया|"[73]

धर्म के मूल में झाँकें तो उसमें एकता, पवित्रता, समानता, सदाचार जैसे तत्व देखने को मिलते हैं, वो अलग बात है कि कुछ लोगों ने इसका प्रयोग जहर की तरह किया| अतः ऊपर इन्हीं बातों को चिन्हित करते हुए लेखिकाओं के उपन्यासों के उद्धरणों को उदाहरण स्वरूप दिखाने का प्रयास किया गया है|

2.4 राजनीतिक परिस्थिति

राजनीति दो शब्दों से बना है राज+नीति| राज यानी की शासन और नीति माने सही समय और स्थान पर सही कार्य करने की कला| "अंग्रेजी में राजनीति के लिए politics शब्द का प्रयोग किया जाता है| इस शब्द की उत्पत्ति यूनानी भाषा के polis शब्द से मानी जाती है, जिसका अर्थ नगर या राज्य है|"[74] ऐसा माना गया है कि प्राचीन समय में यूनान में छोटे-छोटे नगर या राज्य होते थे जिनकी कार्यप्रणाली एवं गतिविधियों का अध्ययन राजनीति के अंतर्गत देखा जाने लगा| प्लेटो, अरस्तू, हॉब्स आदि जैसे विचारकों द्वारा दिए गए राजनीतिक सिधान्त न्याय, समानता, संप्रभुता, स्वतंत्रता, राष्ट्रवाद, राज्य, कानून का शासन आदि अवधारणा आज भी राजनीति विज्ञान में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है| प्रथम विश्व युद्ध के बाद से ही परंपरावादी सिद्धांत में काफी बदलाव देखे जाने लगे| जिसका सबसे बड़ा कारण समाज में हो रहे बदलाव से है| जैसे-जैसे हम आधुनिकता से भूमंडलीकरण के दौर में पहुँचते हैं राजनीति भी अपना स्वरूप बदलती हुई नजर आती है| राजनीति में हो रहे ये सभी बदलाव समाज को अंदर और बाहर दोनों तरफ से प्रभावित करता है| अतः राजनीति किसी भी समाज की व्यवस्था को सुचारू बनाने में कारगर साबित होता है| आगे कुछ विचारकों के मत को इस सन्दर्भ में देख सकते हैं-

डॉ. नगेन्द्र ने राजनीति को कुछ इस प्रकार से परिभाषित किया है - "राजनीति का सामान्य अर्थ है शासन तंत्र और उसकी प्रविधि| इस प्रकार राजनीति की परिधि में शास्त्र-तंत्र, उसके सिधांत और उद्देश्य, पद्धति-प्रक्रिया, रीति-नीति संस्था संगठन आदि का विधान रहा है|"[75]

रामचंद्र शुक्ल द्वारा सम्पादित किताब में राजनीति को कुछ ऐसे परिभाषित किया गया है - "राज्य की वह नीति जिसके अनुसार प्रजा का शासन और पालन तथा दूसरे राज्यों से व्यवहार होता है|"[76]

वहीं शब्दसागर में राजनीति को लेकर कुछ ऐसा लिखा गया है - "वह नीति जिससे राज्य और शासन का संचालन होता है|"[77]

राजनीति समाज को नियमबद्ध तरीके से चलाने में सहायता करती है| यह नियम और सिध्दांत मानव जीवन पर सीधे तौर से लागू होता है| अतः राजनीति मानव जीवन को हर तरह से प्रभावित करती हुई उसे सुगठित बनाती है| आज ऐसा कोई क्षेत्र नहीं बचा है जहाँ राजनीति की पैठ न हो| समाज में अराजकता की स्थिति न होने पाए इसलिए तंत्र का निर्माण किया जाता है| साथ ही समाज सही तरीके से विकास कर सके इसके लिए अच्छी राजनीति का होना अतिआवश्यक होता है| किसी भी समाज में राजनीति व्यवस्था को सुचारू रूप से संचालित करने के लिए होती है| जब यह व्यवस्था अपनी सही दिशा खो देती है तो समाज में अराजकता की स्थिति पैदा हो जाती है| जिसे हम कई स्तर पर देख सकते हैं| आगे इन्हीं सब तत्वों को ध्यान में रखकर पुरस्कृत महिला लेखिकाओं के उपन्यासों को समझने की कोशिश की जा रही है| राजनीति किसी भी समाज के लिए उतना ही जरूरी है जितना कि मानव शारीर के लिए भोजन| ये सभी नियम, कानून समाज के लिए पोषक तत्व की तरह है| इन्ही सभी विचारों पर गौर करते हुए लेखिकाओं के उपन्यासों में वर्णित राजनीतिक व्यवस्था को आगे दिखाने का प्रयास किया जा रहा है|

'जिंदगीनामा' में लेखिका ने राजनीति से उत्पन्न कई तरह के समस्याओं को दिखाने का प्रयास किया है| जिस समय में यह उपन्यास लिखा गया उस समय के राजनीतिक परिवेश और आज के राजनीतिक परिवेश में ज्यादा का फर्क नहीं दिखलाई पड़ता है| उस समय भी शासन व्यवस्था की संपूर्ण स्थिति भाई-भतीजावाद और भ्रष्टाचार के रूप में व्याप्त थी| आज भी इसी रूप में विद्यमान है| इस तरह की अनैतिक व्यवस्था समाज को हर तरफ से खोखला कर देती है| 'जिंदगीनामा' उपन्यास में भी कुछ ऐसे प्रसंग को दिखाया गया है जो शासन व्यवस्था को कटघरे में खड़ा करता है| किसी भी देश की राजनीति में शासन प्रक्रिया सभी के लिए सामान अधिकार देने का प्रावधान बनाता है| देश का समुचित विकास भी तभी होगा जब वहां की न्यायिक प्रक्रिया सभी के लिए एक सामान होगी| लेकिन समाज की न्याय प्रक्रिया की असलियत किसी से कहाँ ही छिपी है| अतः आज लोगों में मोहभंग की स्थिति का उत्पन्न होना सामान्य है| अपने उपन्यास में

लेखिका इसी मोहभंग की बात अपने पात्र के माध्यम से करती हुई नजर आती हैं| न्याय व्यवस्था पर व्यंग्य करते हुए लेखिका ने प्रसंग को कुछ ऐसे अंकित किया है - "बंदा मुसीबत में हो तो कानून भी ढिलाई करता है !"[78] आज समाज की कानून व्यवस्था कितनी बेकार और भ्रष्ट हो गयी है जिसका परिचय आगे उपन्यास में लेखिका कुछ ऐसे देतीं हैं - "जनाब, मैं मौक़ा पर ख़ुद माजूद था| शाहदाद खां के आखिरी अल्फ़ाज़ थे- मेरा मुत्तबन्ना जफ़र है, बोस्तां नहीं| थानेदार बड़ी हरामज़ादी हँसी हँसे इमाम साहब, आप क़त्ल के मुक़दमे में आख़िरी बयान की क़ीमत जानते हैं न ?"[79] अतः इस तरह की कानून प्रक्रिया लोगों में असंतोष का भाव और मोहभंग की स्थिति पैदा कर देती हैं| ऐसी घटनाएँ समाज को अन्दर ही अन्दर कमजोर कर देती है| इस प्रकार लेखिका अपने लेखन के माध्यम से कानून व्यवस्था के दमन और शोषण को दिखाती हैं|

'कलिकथा वाया बाइपास' में अलका जी आजादी से पहले और बाद के राजनीतिक परिवेश का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करती हैं| डेढ़ सौ वर्ष के राजनीतिक इतिहास को अपने पात्रों के माध्यम से कई स्तरों पर खोलती हुई चलती हैं, जिसमें गाँधी, नेता जी, और उन तमाम क्रांतिकारियों को दिखाने का प्रयास करती हैं जो अपने पीछे कई सवाल छोड़ गए हैं| उपन्यास में कई तरह के वैचारिक मतभेद को भी दिखाया गया है, जिसमें लेखिका कुछ गुत्थी को किशोर बाबू के माध्यम से सुलझाने का प्रयास करती हैं तो कुछ प्रश्न पाठक वर्ग पर छोड़ती हैं| उपन्यास में ऐसे कई प्रसंग हैं जो राजनीतिक उथल-पुथल को बयां करता है| साथ ही लेखिका ऐसे कई ऐतिहासिक कालखंडों का भी वर्णन की हैं जो अंग्रेजी शासन के समय की राजनीतिक पृष्ठभूमि को उजागर करता है| लार्ड कर्जन के द्वारा 1905 में किये गए बंगाल विभाजन की घटना, विश्वयुद्ध से उत्पन्न स्थिति, 1939 में कांग्रेस का राजनीति में प्रवेश करने की विस्तृत चर्चा, जापानियों के आक्रमण के खतरे से उत्पन्न स्थिति अकाल की चर्चा, 16 अगस्त 1941 को मुस्लिम लीग और जिन्ना के 'डायरेक्ट एक्शन' के एलान के कारण हुए दंगों का चित्रण किया है, जिसे लेखिका ने "द ग्रेट कैलकटा किलिंग'[80] शीर्षक में दिखाया है| उपन्यास में ऐसे कई अध्याय के शीर्षक को

उदहारण के तौर पर देखा जा सकता है| “कलिकथा : 1940”[81], “नाईन्तीन फोर्टी टू : अ लव स्टोरी”?[82], “आजादी के छाव में”[83], “हिजड़े और पार्टीशन : उन्नीस सौ सैंतालिस”[84], “समवेयर इन द नार्थ”[85], “७ नवंबर, प्रसन्न कुमार टैगोर स्ट्रीट”[86] के द्वारा उस समय के तत्कालीन राजनीतिक परिदृश्य से उत्पन्न स्थिति को विस्तार से बताने का प्रयास किया है|

‘मिलजुल मन’ में लेखिका ने आजादी के तुरंत बाद समाज में आये राजनीतिक बदलाव के प्रति असंतोष भाव को पात्रों के माध्यम से दिखाने का प्रयास किया हैं| विश्व स्तर पर हो रहे राजनीतिक समीकरण से आये बदलाव और उसका भारत पर असर के साथ, दूसरे देशों से कर्ज़ लेने के लिए किये गए प्रयास, अमरिकी कंपनी का भारत में धीरे-धीरे अपनी पकड़ बनाना लेखिका को खलता है| राजनीति की वर्तमान स्थिति को देखते हुए लेखिका उपन्यास में कई जगहों पर राजनेताओं पर व्यंग और कटाक्ष करती हैं - “माली हिकमत के नाम पर सरकार के पास सिफ़र के अलावा कुछ नहीं है| हमारा वज़ीर मालियात कटोरा लिए, इस मुल्क से उस मुल्क घूमता है कि दो मदद के नाम पर कर्ज़ दो|”[89]

‘पारिजात’ उपन्यास में लेखिका ने राजनीति से जुड़े कई सवालों को सामने लाने का प्रयास किया है| अपने उपन्यास ‘पारिजात’ में ‘नासिरा शर्मा’ राजनीतिक उथल-पुथल का सजीव चित्र कई तरह से खींचती हुई नजर आती हैं| किसी भी समाज की राजनीति उसके शिक्षित वर्ग के द्वारा ही सवालों के घेरे में आ पाती है| इसलिए कहा जाता रहा है कि राजनीति में शासक और प्रजा का भिन्न मत होना उसे स्वस्थ बनाता है| राजनीति किसी भी राष्ट्र का निर्माण कर उसे सशक्त और संतुलित बनाती है, लेकिन आज के समय में कुछ दूषित मानसिक प्रवृत्ति के लोगों की वजह से यह अपना असली चेहरा खोती जा रही है|

साहित्यकार जब कभी कोई ऐसा प्रसंग अपने साहित्य में अंकित करता है जो तथ्य पर आधारित हो तो उसका प्रभाव और संभावित परिणाम से उत्पन्न स्थिति को संवेदना पूर्वक अपने लेखन का हिस्सा बनाता है, ताकि अगली पीढ़ी को उससे कुछ सीख मिल सके| ऐसे ही एक प्रसंग

को नासिरा शर्मा अपने उपन्यास में लिखती हैं जो राजनीति के क्रूरतम रुप को प्रस्तुत करता है| 'पारिजात' उपन्यास में लेखिका ने एक ऐसे ही युद्ध का वर्णन किया है जो एक तरफ मानवता के असीम रुप को दिखता है तो वहीं उसका दूसरा पक्ष दूषित और अन्याय युक्त राजनीति को दिखाता है| उपन्यास में लेखिका ने कर्बला के युद्ध की मार्मिक छवि को प्रस्तुत किया है| जहाँ एक साथ मानवीय और अमानवीय तस्वीर उभर कर सामने आती है| इस्लाम में मर्सिया पढ़ने का चलन था| यह मर्सिया इस्लाम धर्म के संस्थापक हजरत मुहम्मद के नवासे हुसैन की शहादत में याद कर गाया जाता है| संक्षेप में कर्बला युद्ध को समझने के लिए इतनी जानकारी काफी है कि जिस पद के सही दाबेदार हुसैन थे उस पद पर किसी और ने अपना हक़ बताया और फिर उसके छिन जाने पर बड़ी ही बेरहमी से उन तमाम बहत्तर (72) लोग जिनमें बच्चे, बूढ़े, स्त्रियाँ थीं सबको मार दिया| यह मार्मिक घटना उस समय के मुस्लिम शासकों के अन्याय, कुशासन और अमानवीय रुप को दिखती है जिसके द्वारा मानवता प्रेमी, असहायों व निर्बलों की सहायता करने वाले हुसैन और उनके साथ खड़े सभी छोटे-बड़े को किस प्रकार अमानवीय यातनाएँ देकर कत्ल कर दिया जाता है| उपन्यास में एक ऐसे ही अमानवीय और क्रूर तस्वीर को लेखिका मर्सिया के माध्यम से दर्शाती है जो इस प्रकार है-

"क्या अशकिया थे जिनको न आया तरस जरा / आया जो तीर छिद गया मासूम का गला| / नन्ही-सी जान ख़ुल्द को पर्वाज कर गई, / मौला तड़प के रह गए दुनिया बिखर गई|"[88]

आगे ऐसे ही एक अन्य प्रसंग में अनेकों युद्धों की राजनीति से उत्पन्न विभीषिका को लेखिका कुछ ऐसे प्रस्तुत करती हैं - "सुनते-सुनते अचानक रोहन के दिमाग में कौंधा, तो क्या बुश साअद के खानदान से थे? उसकी आँखों के सामने जाने कितने इलाक़े खून से नहाए गुज़रने लगे और फ़ौजी दोस्तों की मार्च करती बूटों की आवाज़ें | इराक़ और ईरान जंग, ट्रेड टावर का ध्वंस होना और अफ़गानिस्तान पर टपकते कलस्टर बम उसका कान जैसे फाड़ने लगे हों| औरतों और बच्चों

की लाशें खून से लथपथ और सारी दुनिया ख़ामोश तमाशाई| अरब संसार चुप और यहाँ चौदह सौ साल पहले की घटना पर यह हाय...हाय...|"[89]

पारिजात' में लेखिका एक हिंसात्मक घटना के माध्यम से राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय राजनीतिक मतभेद से उत्पन्न आतंकवाद की स्थिति का भी वर्णन करती हैं| आतंकवाद आज के आधुनिक दौर में एक ऐसी समस्या बनकर सामने आया है जो पूरे विश्व को अपनी चपेट में ले चुका है| आये दिन इसके दहशत को हम देख रहे हैं| एक छोटा सा प्रसंग लिख कर लेखिका समय की नाजुकता को उपन्यास के काफी शुरू में दिखाने समझाने का प्रयास किया है - "कमरे में शोर यकायक थम गया जब स्क्रीन पर मुंबई के ताज होटल से उठता गहरा धुआँ सबने देखा| ख़बर ऐसी थी कि सबको चुप लग गई| अब तक का सबसे बड़ा आतंकवादी हमला| ताज और ओबेराय में आतंकवादियों ने विदेशी और देशी लोगों को बंधक बना रखा है| गोलियों की बौछार में कई पुलिस वाले मारे गए...., समझ में नहीं आ रहा है कि यह सब कहाँ जाकर ख़त्म होगा ! चुनाव की गर्मागर्मी, उसमें ... तभी लाईट चली गई और झुँझलाकर बोलने वाला चुप हो गया| इसी तरह की बेबसी-भरी झुंझलाहट आतंकवाद का बेस बनती है| मजाक नहीं कर रहा हूँ मैं| कोई पेपरवेट उठाकर पटकता है तो कोई फाईल फेंकता है तो कोई बम फोड़ता है| आक्रोश भी ज़मीन देखकर अपना रूप धरता है और यह सब जो हो रहा है, उसके पीछे बुनियादी कारण अन्याय है| चाहे वह आर्थिक हो, सामाजिक हो या फिर सियासी|"[90] आतंकवाद दरअसल मानव द्वारा बनाई गई विपदा है जिसक श्रेय विकसित राष्ट्र और विकासशील राष्ट्र के बीच की प्रतिश्पर्धा को जाता है| यह मानव के द्वारा बोया गया एक ऐसा बीज है जो रह रहकर अपनी अमानवीय तस्वीर दुनिया के सामने जाहिर करता रहता है| इस आतंकवादी घटना के माध्यम से लेखिका आज के विगत समय की सच्चाई को उजागर करती हुई नज़र आती हैं|

अतः लेखिकाओं ने अपने उपन्यासों में राजनीति के विभिन्न पक्षों को रेखांकित करते हुए उसकी महत्ता और उसके दोषपूर्ण माहौल पर भी बराबर प्रकाश डाला है|

2.5 आर्थिक परिस्थिति

"आर्थिक शब्द से तात्पर्य 'द्रव्य संबंधी, धन संबंधी, माली होता है|"[91] किसी भी समाज में अर्थ का महत्त्व जरुरत की वस्तु को प्राप्त करने के लिए होता है| एक सामान्य जीवन व्यतीत करने के लिए मनुष्य के जीवन में अर्थ एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है| वहीं जब यह जरूरत से बढ़कर महत्त्वाकांक्षा का रुप ले लेती है तो मनुष्य की अमानवीय प्रवृत्ति को उजागर कर देती है| अर्थ ही है जो जीवन को संतुलित भी करती है और वीभत्स भी बना देती है| अर्थ का समय भी बदलता रहा है| कोई समय ऐसा था जिसमें अर्थ की लोलुपता बहुत नहीं हुआ करती थी जो होती थी वो मवेशियाँ, पेड़ और बाग़ पर ही सिमटा हुआ था| जैसे-जैसे समय बदलता गया अर्थ ने भी अपना आवरण बदल लिया| आज यही अर्थ अपनी अलग पहचान लिए जैसे- विदेश में रहना, बड़ा घर, गाड़ी आदि के रूप में हमारे समाज में व्याप्त है| महत्वाकांक्षा ने आज अर्थ की महत्ता को जीवन का परम उद्देश्य के रूप में स्थापित कर दिया है|

प्राचीन समय में जीवन के चार पुरुषार्थ माने गए- धर्म, अर्थ, कर्म और मोक्ष| परन्तु आज के पूँजीवादी दौर ने सिर्फ अर्थ को ही जीवन का पुरुषार्थ माना| हम जैसे-जैसे प्रगति करते जा रहे है जीवन में सिर्फ अर्थ की ही महत्ता बची रह गयी| ऐसे में आज हर कोई अर्थ के पीछे आंख बंद करके भाग रहा है| यह ललक मानव को संवेदनहीन और कठोर बनाती जा रही है| जो एक स्वस्थ समाज के लिए बेहद नुकसानदेह साबित हो रहा है| ऐसे ही कुछ प्रसंग लगभग सभी उपन्यासों में देखने को हमें मिलता है| समाज में फैले आर्थिक असामनता, बेरोजगारी, निर्धनता, शोषितों का जीवन संघर्ष, आदि का वर्णन उपन्यास में व्यक्त प्रसंगों के माध्यम से दिखाने का प्रयास किया गया है|

समाज में आर्थिक असामनता एक रोग की तरह है जिसने समाज को अंदर और बाहर दोनों तरफ से खोखला कर दिया है| आर्थिक रुप से कमजोर वर्ग के लिए समाज में एक प्रतिष्ठित जीवन जीना मुश्किल ही नहीं नामुमकिन है| आज आर्थिक विषमता समाज की कई बड़ी समस्याओं

में से एक है, जो मनुष्य को मनुष्य से अलग करता है| सभी लेखिकाओं ने अपने-अपने उपन्यास में आर्थिक असमानता से उत्पन्न समस्याओं के यथार्थ रूप को दिखाया है| जिसमें बेरोजगारी, निर्धनता, भुखमरी, भ्रष्टाचार, स्वार्थभाव, बेईमानी जैसी समस्याओं को विस्तार से दिखाया गया है| आगे इन सभी समस्याओं को उपन्यास के माध्यम से सोउदहारण समझा गया है|

'जिंदगीनामा' उपन्यास में कृष्णा सोबती शाह के माध्यम से इसी समस्या को रेखांकित करती नजर आती हैं| सामंती व्यवस्था को केंद्र बनाकर यह उपन्यास लिखा गया है, जिससे समाज की आर्थिक असामनता की सच्ची तस्वीर दिखाई जा सके| लेखिका ने शाह जी के माध्यम से सामंती समाज की पोल-खोल कर रख दी है| किस तरह से भारतीय समाज की सामंती व्यवस्था किसान वर्गों के लोगों का शोषण करती है इसका एक खांका यहाँ प्रस्तुत किया गया है| जहाँ एक तरफ गाँव के अंचल की खेतों के माध्यम से उसकी सुन्दर तस्वीर लेखिका खींचती हैं वहीं किसान और जमींदार के माध्यम से शोषक और शोषित वर्ग की सच्चाई को भी पूरी ईमानदारी से लिखती हैं| किसान की किसानी और जमींदार की जमींदारी इस उपन्यास की रोचकता को और धार प्रदान करता है| किसान किस तरह से दिन-रात मेहनत कर अपना जीवन यापन करता है और जमींदार शाह जी पूरा लाभ उठाकर अपने घर को भरता रहता है| उपन्यास में ऐसे कुछ प्रसंग हैं जो इस समाज की शोषक-शोषित स्थिति को अंकित करता है, जिसे आगे वर्णित किया गया है - "किसी ने सच कहा है, शाह का रुपया दूसरे की हथेली पर पहुँचकर चौगुना हो जाता है|"[92] शोषक वर्ग के असलियत को एक और उदाहरण से समझा जा सकता है| आगे लेखिका लिखती हैं कि किस तरह शोषित वर्ग इनसे डरा सहमा रहता है, कैसे जी हुजूरी में ही वो अपनी भलाई समझते हैं इस एक प्रसंग से समझा जा सकता है - "जी, जिवियों की मेहनत-मजूरी जट्ट किसान के जिम्मे और घुड़चढ़ी-निगरानी शाहों के ! घोड़े पर चढ़ इधर-उधर खेतों पर नज़र मारी, मशीरी की और हर फ़सल के दाने अपने कोठों में भर लिए ! पसीना बहाया तो काम्मियों ने ! बस ओए मेहरा, अफलातूनी न झाड़ ! रोटी-टुक्कड़ जो सिदक से मिल रहा है, उससे भी जाएगा|"[93] अर्थ की कमी

ने किसान वर्ग को पूरी तरह से जमींदारों पर आश्रित कर दिया| गरीबी के कारण ये न तो कुछ बोल पाते हैं और न ही कुछ कर पाते हैं| किन्तु एक समय ऐसा भी आता जब इनके सब्र का बांध धीरे-धीरे टूटता दिखता है जहाँ ये एकजुट होकर शोषण के विरुद्ध अपनी आवाज बुलंद करते हैं|

लेखिका किसान वर्ग में आई चेतना को अंकित करती हुई शोषण के विरुद्ध अपनी आवाज़ बुलंद करते हुए मेहरअली द्वारा सशक्त और विरोधी संवाद को प्रसंग के माध्यम प्रस्तुत करती हैं| जहाँ मेहरअली कहता है कि अब कोई भी उसका शोषण नहीं कर सकता अब जो बोएगा वही कटेगा भी और खायेगा भी| इस असमान व्यवस्था की अकुलाहट अब उसे परेशान करने लगी है - "चार आना सूद एक रुपया पर और एक पंड दानों की बीघा ज़मीन पर| बाकी जो बचा-ख़ुचा, उसमें कम्मी-कमीनों की उम्में पार| .... दूध-मलाई धनाढ़ शाहों की और छाछ-लस्सी हमारी ! लानत हमारी मेहनतों पर !"[94] पीढियों से चली आ रही इस कुचक्र में फंसे लोग यह समझना ही नहीं चाहते कि उनपर जो अत्याचार हो रहे हैं वो सही नहीं है| फरमानअली इसे अपना कर्म समझता है और वह कहता भी है कि जट्ट के हिस्से में पसीना बहाना ही लिखा है| यह प्रसंग बिलकुल 'गोदान' के होरी जैसी दिखती है जिसमें वो कहता है कि उनका जन्म ही भगवान की नियति है| इस पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आ रही प्रथा को फ़रमानअली कुछ ऐसे स्वीकार करते हुए कहता है - "पुत्तरा, वित्त में रह| काँटोंवाले झड़ी-बूटी के बेर उगने चला है क्या? ओ भोलया, शाहों की मल्कीयतें लाल बहियों में और हमारी अपने वजूदों में ! शाह जितना हाथ फैलाए सो उसका| जट्ट जितना पसीना बहाए सो उसका|"[95] इस सन्दर्भ से इतना समझा जा सकता है कि इनकी इस अवस्था का मूल कारण वे खुद ही है| बहुत कम लोग होते हैं जो इस तरह के शोषण को समझ कर उसका विरोध करने की हिम्मत रखते हैं| इस तरह के प्रसंग को लेखिका अंकित करते हुए गाँव के विषम परिवेश और उसके अन्दर की कुरूपता को शोषित वर्ग के लोगों द्वारा दिखाने का प्रयास किया है|

'कलिकथा वाया बाइपास' में लेखिका ने समाज में व्याप्त अर्थ की समस्या को समय सापेक्ष दिखाया है| इतिहास और वर्तमान दोनों इस समस्या से जूझते हुए इंसान किस तरह से घुट और

पिस रहा है उपन्यास में इसके अनेकों प्रसंग हैं| उपन्यास में किशोर केन्द्रीय पात्र है जो समाज के मध्यमवर्गीय परिवार से आता है| इसके माध्यम से लेखिका ने इसके इर्द-गिर्द उपस्थित सभी वर्ग को इससे जोड़कर कोलकता शहर की आर्थिक विषमता से उत्पन्न स्थिति को दिखाया है| 'अकाल कभी होता नहीं' शीर्षक में अलका जी ने 1956 के समय में हुए अकाल विभीषिका से जूझते और मरते हुए लोगों की भयावह तस्वीर के यथार्थ रूप को बड़े मार्मिक तरीके से अपने उपन्यास में अंकित किया है - "लोगों ने भूख के मारे कच्चा बाजरा या चना ही फांक लिया| अपने बच्चे तक बेच डाले| कई जगह लाशों की कमर में अंटी में सिक्के बंधे हुए मिले| अनाज इतना महंगा हो गया था कि उसे खरीदने के लिए उन पैसों को खर्च कर देने के बजाय लोगों ने मौत को चुना|"[96] अलका जी अपने उपन्यास में पांच पीढ़ियों के परिवेश को बड़ी बारीकी से समझा और लिखा है| उपन्यास में लेखिका आर्थिक असामनता के कई चरण को परत-दर-परत खोलती नजर आती हैं|

एक तरफ जहाँ अर्थ ने संबंधों को अपनी चपेट में लिया है वहीं समाज का अन्य हिस्सा भी इससे अछूता नहीं रहा है| साथ ही सरकारी एवं गैरसरकारी व्यवसाय का क्षेत्र भी इससे उतना ही प्रभावित हुआ है| आज के समय में व्याप्त निर्धनता और गरीबी को देखते हुए नासिर शर्मा अपने उपन्यास 'पारिजात' में कुछ ऐसे प्रसंग लिखती हैं जो समय की कड़वी सच्चाई को उजागर करता है - "देख तो रहे हो दुनिया का हाल| मंदी ने कितने घरों को फ़ाके की नौबत ला दी| कितनों ने आत्महत्या की है और फीस न देने पर कितने बच्चे स्कूल में अपमानित होकर घर बैठे है|"[97]

वर्तमान समय अर्थ युग हो गया है, जहाँ रक्त संबंध से ऊपर अर्थ को देखा जाने लगा है ऐसे ही कई प्रसंग को पारिजात में लेखिका ने दिखाया है| जहाँ एक तरफ भूमंडलीकरण के दौर ने पूरे विश्व को एक छत के नीचे ला दिया है, वहीं इसकी भयावह तस्वीर एक विकृत समाज का निर्माण भी करता हुआ नजर आ रहा है, जिससे सभी भलीभांति परिचित हैं| आज के दौर ने अर्थ को ज्यादा महत्ता प्रदान की जिस कारण से आज की पीढ़ी देश-विदेश में जाकर कमाने और बसने में तनिक भी संकोच नहीं करती है| फिरदौस जहाँ का परिवार भी इसी दौर का एक उदाहरण

प्रस्तुत करता है| इनका बेटा मोनिस भी पैसे कमाने और अच्छी जीवन शैली के लिए यूरोप में जाकर बस जाता है| फिरदौस जहाँ अपने बेटे-बहु और पोता-पोती के लिए व्याकुल रहती है, लेकिन संबंध यहाँ अर्थ से किस प्रकार कमतर हो गया है देखा जा सकता है - "मैं तो ठीक हूँ बेटे ! इधर मैं तन्हा ! उधर तुम्हारी बहन तन्हा ! डोंट वरी मॉम, मैं उसको यूरोप घुमाने का शानदार प्रोग्राम बना रहा हूँ| आप और वह दोनों आकर मेरे पास रहें फिर देखिये... तुम कब आ रहे हो मेरे कलेजे ! ये आँखे तरस रही हैं| नो मोर डायलाग मॉम ! उस शहर की ठहरी जिन्दगी में मुझे आकर मरना नहीं है|"[98] किस तरह से माँ से बढ़ कर स्थान जीवन में वस्तु जगत ने ले लिया है यहाँ देखने योग्य है| अर्थ की महत्ता लोगों को धीरे-धीरे अन्दर से खोखला और सीमित कर रही है - "अच्छा मॉम, अपना ख़याल रखिएगा| मैंने चेक डाल दिया है| गुडनाईट| गुडनाईट| कहते-कहते फ़िरदौस जहाँ अपने आँसू रोक नहीं पाईं| कैसे कहतीं कि मुझे चेक की नहीं, तुम्हारी चाहत है|"[99] आज के समय को देखते हुए लेखिका जीवन के कटु सत्य को अर्थ के माध्यम से अपने उपन्यास में जगह-जगह स्थान दिया है| कम समय में बहुत पाने की इच्छा मनुष्य को संवेदना के स्तर पर खाली करती जा रही है| उपन्यास में व्यक्त यह यथार्थ रूप आज के समय को ध्यान में रखकर ही लेखिका ने लिखा है, जिसे हम अपने आस-पास देख सकते हैं| इस तरह का प्रसंग हमें आज के समय की नाजुकता को ध्यान में रखते हुए सजग होने की तरफ इशारा करता है|

निष्कर्षतः प्रस्तुत अध्याय में युगीन परिस्थिति के विभिन्न आयामों को लेखिकाओं के उपन्यासों के माध्यम से समझाने का प्रयास किया गया है| समाज की विभिन्न परिस्थितियों को लेखिकाओं ने अपने लेखन का विषय बनाया है| जिसका पूर्णरूप से उपन्यासों में चित्रण किया गया है| अतः ऐसा कहा जा सकता कि यहाँ समस्या और समाधान दोनों की समान और संतुलित व्याख्या देखी जा सकती है|

सन्दर्भ सूची -

1. डॉ. नगेन्द्रनाथ बसु, हिंदी विश्वकोश, पृष्ठ-622

2. डॉ. नगेन्द्र, मानविकी पारिभाषिक कोश (साहित्य खंड), पृष्ठ-196

3. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, बृहत् प्रमाणिक कोश, पृष्ठ-761

4. सरिता वशिष्ठ, युगबोध और हिंदी नाटक, पृष्ठ-2

5. डॉ. नगेन्द्र, मानविकी पारिभाषिक कोश (साहित्य खंड), पृष्ठ-109

6. आचर्य रामचन्द्र वर्मा, शब्दार्थ-विचार-कोश, पृष्ठ-335

7. डॉ. हरीश कुमार सेठी, जीवन-मूल्य-विमर्श, पृष्ठ-262

8. वही, पृष्ठ-269-70

9. मुंशी प्रेमचंद, साहित्य का उद्देश्य, पृष्ठ-4

10. शिवराम वामन आप्टे, संस्कृत-हिंदी-कोश, पृष्ठ-1076

11. मदन मोहन पांडेय, समाजशास्त्र की विवेचना, पृष्ठ-15

12. वही, पृष्ठ-15

13. R.M. Macaiver and C.H. Page, society, पृष्ठ-5

14. डॉ. रवीन्द्रकुमार सिंह, संतकव्य की सामाजिक प्रासंगिकता, पृष्ठ-19

15. जोगेंद्र सिंह, फणीश्वरनाथ रेणु का कथा साहित्य- समाजशास्त्रीय विश्लेषण, पृष्ठ-17-18

16. Macaiver and Page, Society, पृष्ठ-238

17. कृष्णा सोबती, जिंदगीनामा, पृष्ठ-29

18. अलका सरावगी, कलिकथा : वाया बाइपास, पृष्ठ-10

19. मृदुला गर्ग, मिलजुल मन, पृष्ठ-81

20. नासिरा शर्मा, पारिजात, पृष्ठ-27

21. चित्रा मुद्गल, नाला सोपारा, पृष्ठ-44

22. वही, पृष्ठ-28

23. मैनेजर पाण्डेय, आलोचना की सामाजिकता, पृष्ठ-भूमिका से

24. रामचंद्र वर्मा, संक्षिप्त हिंदी शब्दसागर, पृष्ठ-884

25. डॉ. गोपालकृष्ण अग्रवाल, समाजशास्त्र, पृष्ठ-288

26. डॉ. गजानन सुर्वे, स्वातंत्र्योत्तर हिंदी नाटकों का सांस्कृतिक अध्ययन, पृष्ठ-13

27. डॉ. मैनेजर पाण्डेय, साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका, पृष्ठ-67

28. रामधारी सिंह दिनकर, हमारी सांस्कृतिक एकता, पृष्ठ-1-2

29. श्यामचरण दुबे, भारतीय संस्कृति का स्वरूप, पृष्ठ-3

30. रामधारी सिंह दिनकर, संस्कृति के चार अध्याय पृष्ठ-9

31. कृष्णा सोबती, जिंदगीनामा, पृष्ठ-20

32. वही, पृष्ठ-21

33. वही, पृष्ठ-21-22

34. वही, पृष्ठ-33

35. वही, पृष्ठ-41

36. वही, पृष्ठ-38-39

37. वही, पृष्ठ-39

38. वही, पृष्ठ-39

39. नासिरा शर्मा, पारिजात, पृष्ठ-37

40. वही, पृष्ठ-9

41. वही, पृष्ठ-341

42. वही, पृष्ठ-143-144

43. वही, पृष्ठ-356

44. वही, पृष्ठ-157

45. वही, पृष्ठ-477

46. वही, पृष्ठ-76

47. वही, पृष्ठ-89

48. वही, पृष्ठ-421

49. वही, पृष्ठ-148

50. वही, पृष्ठ-149

51. श्याम सुन्दर दास, हिंदी शब्दसागर, पृष्ठ-1681

52. डी.आर. विद्याभूषण, समाजशास्त्र के सिद्धांत, पृष्ठ-45

53. गीतारानी अग्रवाल, धर्मशास्त्रों का समाज दर्शन, पृष्ठ-77

54.सर्वपल्ली राधाकृष्ण, धर्म और समाज, पृष्ठ-45

55. डॉ. भीमराव अम्बेडकर, vol.6, पृष्ठ-19

56. कृष्णा सोबती, जिंदगीनामा, पृष्ठ-31

57. वही, पृष्ठ-43

58. वही, पृष्ठ-83

59. वही, पृष्ठ-9

60. अलका सरावगी, कलिकथा:वाया बाइपास, पृष्ठ-9

61. मृदुला गर्ग, मिलजुल मन, पृष्ठ-16

62. रामचन्द्र शुक्ल, चिंतामणि(भाग-1), पृष्ठ-23

63. नासिरा शर्मा, पारिजात, पृष्ठ-28

64. वही, पृष्ठ-17

65. वही, पृष्ठ-433

66. राधाकृष्ण, धर्म और समाज, पृष्ठ-40

67. नासिरा शर्मा, पारिजात, पृष्ठ-433

68. वही, पृष्ठ-58-59

69. वही, पृष्ठ-277

70. वही, पृष्ठ-32

71. वही, पृष्ठ-35

72. वही, पृष्ठ-158

73. वही, पृष्ठ-159

74. महादेव प्रसाद शर्मा, राजनीति के सिद्धांत, पृष्ठ-2

75. डॉ. नगेन्द्र, साहित्य का समाजशास्त्र, पृष्ठ-6

76. रामचन्द्र शुक्ल, लोकभारती हिंदी कोश, पृष्ठ-753

77. रामचन्द्र वर्मा, संक्षिप्त हिंदी शब्द सागर, पृष्ठ-589

78. कृष्णा सोबती, जिंदगीनामा, पृष्ठ-91

79. वही, पृष्ठ-99

80. अलका सरावगी, कलिकथा : वाया बाइपास, पृष्ठ-157

81. वही, पृष्ठ-15

82. वही, पृष्ठ-114

83. वही, पृष्ठ-177

84. वही, पृष्ठ-212

85. वही, पृष्ठ-7

86. वही, पृष्ठ-72

87. मृदुला गर्ग, मिलजुल मन, पृष्ठ-199

88. नासिरा शर्मा, पारिजात, पृष्ठ-80

89. वही, पृष्ठ-78

90. वही, पृष्ठ-14

91. नवल(संपा.), नालंदा विशाल शब्द सागर, पृष्ठ-132

92. कृष्णा सोबती, जिंदगीनामा, पृष्ठ-91.

93. वही, पृष्ठ-86

94. वही, पृष्ठ-86-87

95. वही, पृष्ठ-87

96. अलका सरावगी, कलिकथा : वाया बाइपास, पृष्ठ-143

97. नासिरा शर्मा, पारिजात, पृष्ठ-410

98. वही, पृष्ठ-136

99. वही, पृष्ठ-136